कुरुक्षेत्र

जुलाई 2000

ग्रामीण विकास को समर्पित

मूल्य : सात रुपये

- पानी की हर बूंद कीमती
- जल संकट : एक गम्भीर चुनौती
- अस्तित्व का प्रश्न हो गया है जनसंख्या नियंत्रण

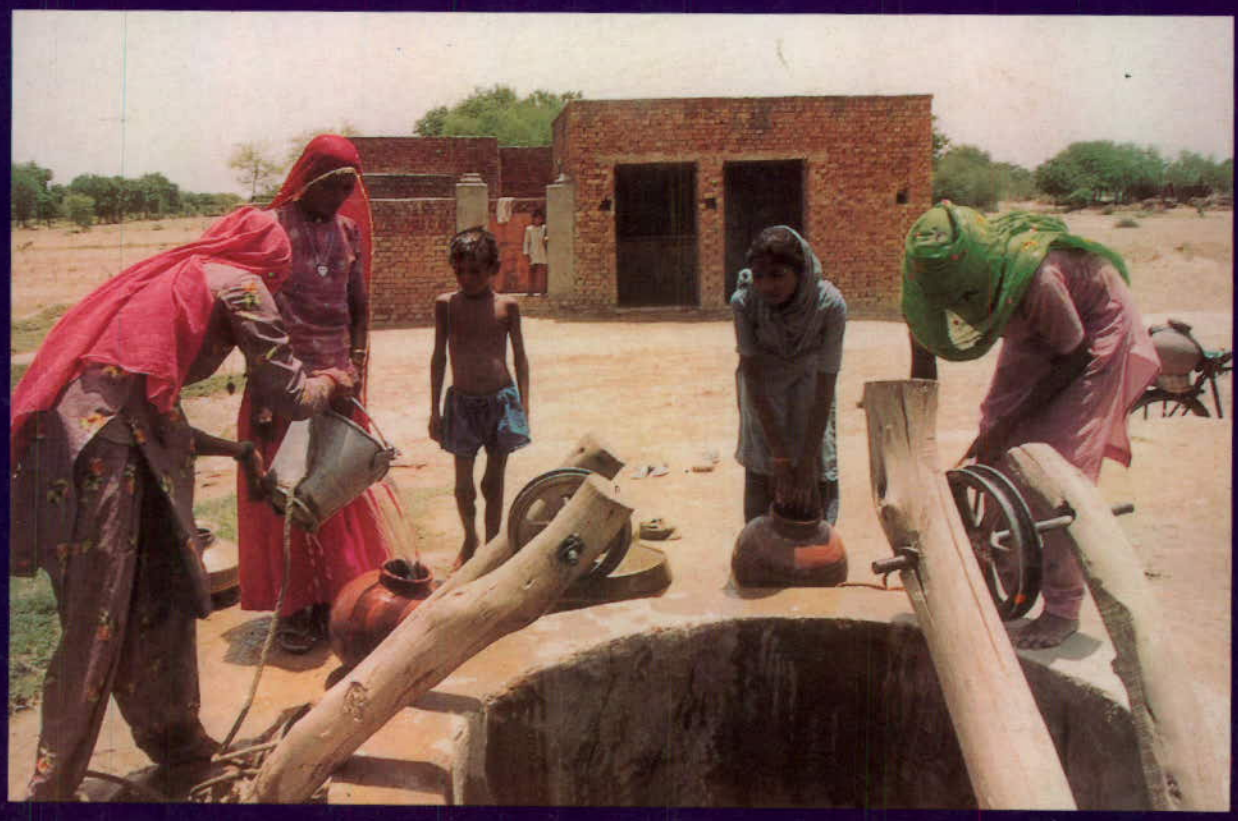

बंजरभूमि से संबंधित एटलस का प्रधानमंत्री द्वारा विमोचन

ग्रामीण विकास मंत्री श्री सुन्दर लाल पटवा, ग्रामीण विकास राज्य मंत्री श्री सुभाष महरिया और श्री ए. राजा प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी को एटलस भेंट करते हुए

प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने इस वर्ष 22 मई को नई दिल्ली में बंजरभूमि से संबंधित एटलस का विमोचन किया। ग्रामीण विकास मंत्री श्री सुन्दरलाल पटवा ने उन्हें यह एटलस प्रस्तुत की।

अंग्रेजी में प्रकाशित इस एटलस में देश की बंजरभूमि के स्वरूप और क्षेत्रफल का आकलन करने का प्रयास किया गया है। इससे बंजरभूमि के विकास के लिए योजनाएं बनाने में सहायता मिलेगी। ग्रामीण विकास मंत्रालय के भूमि संसाधन विभाग और राष्ट्रीय सुदूर संवेदी एजेंसी के संयुक्त प्रयासों से प्रकाशित इस एटलस में बताया गया है कि देश में कुल 6 करोड़ 38 लाख 50 हजार हेक्टेयर क्षेत्र बंजरभूमि के रूप में है। यह देश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 20.17 प्रतिशत है। केरल में सबसे कम 3.73 प्रतिशत और जम्मू कश्मीर में सबसे ज्यादा बंजरभूमि है।

एटलस में बंजर भूमि को राज्यवार और वर्गवार दिखाया गया है। यह एटलस शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं, केन्द्र और राज्य सरकारों तथा कृषक वर्ग के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी। इससे समेकित बंजरभूमि विकास परियोजना, सूखा बहुल कार्यक्रम और मरुभूमि विकास कार्यक्रम जैसे कार्यक्रमों को लागू करने में मदद मिलेगी।

समारोह में ग्रामीण विकास राज्य मंत्री श्री सुभाष महरिया और श्री ए.राजा, ग्रामीण विकास विभाग के सचिव तथा अन्य वरिष्ठ अधिकारी मौजूद थे।

साभारः पत्र सूचना कार्यालय

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय
की
प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष 45 अंक 9

आषाढ़–श्रावण 1922

जुलाई 2000

संपादक
बलदेव सिंह मदान

उप संपादक
जयसिंह

संपादकीय पता
संपादक, 'कुरुक्षेत्र',
ग्रामीण विकास मंत्रालय,
कृषि भवन, नई दिल्ली–110001
दूरभाष : 3015014
फैक्स : 011–3015014
तार : ग्राम विकास

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी.एन. गांधी

विज्ञापन प्रबंधक
के.एस. जगन्नाथ राव

आवरण सज्जा
मोनिका

रेखांकन
दीपक सूरी

फोटो साभार :
मीडिया डिवीजन, ग्रामीण विकास मंत्रालय

मूल्य एक प्रति : सात रुपये
वार्षिक शुल्क : 70 रुपये
द्विवार्षिक : 135 रुपये
त्रिवार्षिक : 190 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)
पड़ोसी देशों में : 500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में : 700 रुपये (वार्षिक)

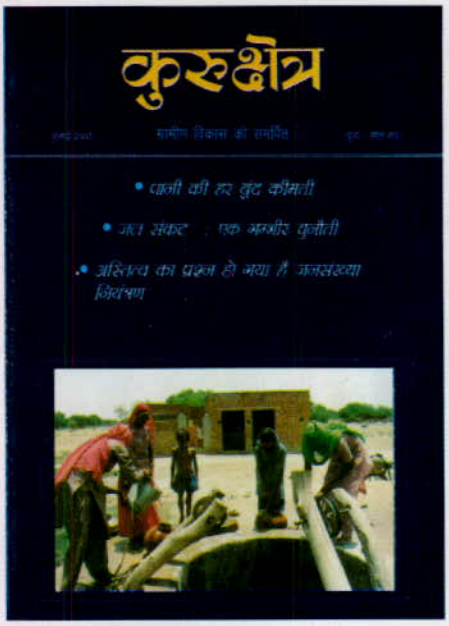

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक–4, लेवल–7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक–4, लेवल–7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। फोन : 6105590

हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी में भी प्रकाशित होने वाली इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

इस अंक में

- पेयजल समस्या, व्यापक दृष्टिकोण अपनाना होगा — भारत डोगरा — 3
- पानी की हर बूंद कीमती — डा. कैलाश चन्द्र पपनै — 6
- जल संचय से आती है हरियाली — जितेन्द्र गुप्त — 10
- पेयजल एक आधारभूत आवश्यकता — डा. जयंती लाल भंडारी — 14
- जल संकट : एक गम्भीर चुनौती — डा. रवि शंकर जमुआर — 16
- कमला (कहानी) — विनोद कुमार लाल — 19
- भारत में जल संसाधनों का विकास — डा. संजीव दुबे — 22
- राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना की सार्थकता — एच.पी. सिंह — 25
- जनसंख्या वृद्धि एवं आर्थिक विकास — डा. ओम प्रकाश सिंह — 27
- अस्तित्व का प्रश्न हो गया है जनसंख्या नियंत्रण — इरा सिंह — 35
- पर्यावरण संरक्षण और रोजगार की संभावनाएं — डा. आनंद तिवारी — 36
- खुम्ब की खेती : ग्रामीण रोजगार का साधन — जग नारायण — 38
- श्रमदान से पुराने तालाबों का जीर्णोद्धार हुआ — जगदीश मालवीय — 40
- तरावटी गुणों से भरपूर ग्रीष्म ऋतु का टानिक है खरबूजा — ललन कुमार प्रसाद — 41
- चतुर्भुजः प्रेरणा का प्रकाश स्तम्भ (स्थायी स्तम्भ) — 43

पाठकों के विचार

महिला सरपंचों के साहसिक निर्णयों के उदाहरण प्रभावी लगे

कुरुक्षेत्र का फरवरी 2000 का अंक पढ़ा। यह अंक बेहद पसन्द आया। ग्रामीण विकास हेतु स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना पर आधारित लेख अत्यन्त उपयोगी लगा। लेखक डा. उमेशचन्द्र अग्रवाल का प्रस्तुतीकरण अत्यन्त प्रशंसनीय है।

पंचायत के नेतृत्व में कमजोर वर्गों की जागरूकता लेख में लेखक द्वारा किया गया अध्ययन महत्वपूर्ण और तर्कसंगत प्रतीत होता है। *महिला सशक्तिकरण की दिशा में पंचायती राज एवं उ.प्र. में सत्ता का विकेन्द्रीकरण और ग्राम राज की स्थापना* तथा अन्य लेख अत्यन्त रोचक और ज्ञानवर्धक लगे।

महिला सशक्तिकरण.....लेख में लेखक द्वारा जिला अलवर, राजस्थान तथा हरियाणा की ग्राम प्रधान महिलाओं द्वारा लिए गए साहसिक निर्णयों के उदाहरण मैंने स्वयं पर्वतीय क्षेत्र की महिला प्रधानों को एक प्रशिक्षण शिविर में सुनाए। इन उदाहरणों से वे अत्यन्त प्रभावित हुईं।

मेरा सुझाव है कि भविष्य में भी इस प्रकार के लेखों का प्रकाशन ग्रामीण विकास और जागरूकता हेतु अत्यन्त लाभकारी सिद्ध होगा जिनमें वास्तविक जीवन के उदाहरण वर्णित हों।

पत्रिका के समस्त लेख और उनका संपादन पत्रिका के "ग्रामीण विकास को समर्पित" होने

का स्पष्ट प्रमाण है। अपने प्रयास में पत्रिका निश्चित ही सफलतापूर्वक अग्रसर हो रही है और मैं भविष्य में भी इसकी उत्तरोत्तर सफलता की कामना करता हूं।

डा. दिनेशसिंह बंगारी, प्रसार प्रशिक्षण अधिकारी (पशुपालन), क्षेत्रीय ग्राम्य विकास संस्थान, पौड़ी – गढ़वाल।

शिक्षित महिला ही अंधविश्वासों से लड़ सकती है

कुरुक्षेत्र के मार्च 2000 का अंक पढ़ा। प्रभावकारी ग्रामीण चित्रों से सुसज्जित महिलाओं को महिमामंडित करने वाले सभी लेख जानकारीयुक्त हैं। डा. राज भारद्वाज का *(ग्रामीण महिलाओं को सार्थक शिक्षा)* लेख से पूर्ण समहत हूं। शिक्षित स्त्री ही अंधविश्वास, जाति प्रथा, छुआ–छूत, जनसंख्या वृद्धि, निरक्षरता आदि के भयावह भूतों से लड़ सकने में सक्षम हो सकती है। दहेज प्रथा जो सामाजिक कैंसर के रूप में पसरता जा रहा है, इसमें भी अप्रत्यक्ष रूप से अशिक्षित माताओं की मनमानी सहायक बनती है।

ग्रामीण व्यक्ति अपनी गाढ़ी **कमाई को** भूत–प्रेत, जादू–टोना और अन्य **सामाजिक** कुरीतियों को अपना कर खर्च कर देता है। यह पुरुष–प्रधान समाज महिलाओं को चौखट के अंदर कैद करके उसकी शक्ति का गला घोंटने में आज भी सक्रिय है। महिलाओं की शक्ति को देखते हुए ही नेपोलियन कहा करता था – "तुम मुझे अच्छी माताएं दो, मैं तुम्हें अच्छा राष्ट्र दूंगा।" केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित महिला विकास योजनाओं का सही कार्यान्वयन करके ग्रामीण महिलाओं की स्थिति में सुधार किया जा सकता है।

अंकुश्री का लेख *(पर्यावरण की सुरक्षा और जलावन की समस्या)* काफी ज्ञानवर्द्धक है जिसमें लेखक ने गोबर का जलावन के रूप में प्रयोग पर्यावरण के लिए घातक बताया है। पर्यावरण के प्रति सचेत रहना व्यक्ति के कल की मुस्कान के लिए अत्यावश्यक हो गया है।

मुनेश कुमार "शक्ति", कुटुम्बा बाजार (पूर्व), औरंगाबाद (बिहार)

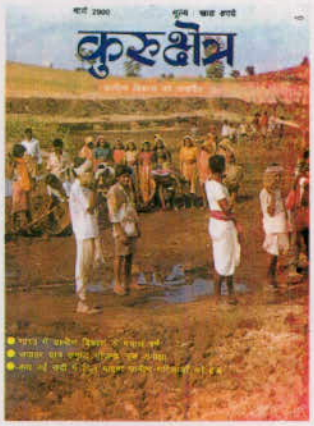

जनसंख्या वृद्धि विकास उपलब्धियों पर पानी फेर देती है

कुरुक्षेत्र के मार्च 2000 के अंक में प्रकाशित ग्रामोन्मुख आलेख पढ़ा। *ग्रामीण विकास के पचास वर्ष, जवाहर ग्राम समृद्धि योजना : एक*

(शेष पृष्ठ 44 पर)

पेयजल समस्या व्यापक दृष्टिकोण अपनाना होगा

भारत डोगरा

देश में, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, पेय जल की समस्या को हल करने के प्रयास काफी लम्बे समय से चल रहे हैं। कई बार कुछ क्षेत्रों के बारे में यह दावा किया जाता है कि वहां यह समस्या सुलझा ली गई है लेकिन कई कारणों से वह क्षेत्र फिर समस्याग्रस्त बन जाता है। हैंड पंपों के सहीं ढंग से रख–रखाव न करने, भू–जल स्तर के नीचे चले जाने या जल–स्रोत के प्रदूषित हो जाने के कारण ऐसा होता है। लेखक का सुझाव है कि इस समस्या को हमें इंजीनियरी दृष्टिकोण से नहीं, अपितु पर्यावरण की दृष्टि से सोचकर हल करने करने का प्रयास करना चाहिए। ऐसी व्यवस्था हो कि जितना जल हम भूमि से लेते हैं उतना वापिस भूमि में जाना चाहिए। जल–स्रोत प्रदूषित तो कदापि नहीं होने देने चाहिए। पेय जल जैसी महत्वपूर्ण समस्या के प्रति उपेक्षा–भाव बिल्कुल नहीं रहना चाहिए।

हमारे सभी गांवों को साफ पेयजल उपलब्ध करवाने के उद्देश्य को हमारे विकास कार्यक्रमों में और आर्थिक नियोजन में बहुत ऊंची प्राथमिकता मिलनी चाहिए थी और काफी हद तक यह प्राथमिकता भारत सरकार ने इस कार्य को दी भी है। अनेक सरकारी दस्तावेजों और घोषणाओं से पता चलता है कि इस कार्य को प्राथमिकता दी गई, इसके लिए काफी बजट का प्रावधान रखा गया, विशेष तकनीकी मिशन की स्थापना की गई, कई अंतर्राष्ट्रीय संगठनों का सहयोग प्राप्त किया गया और कई दस्तावेजों में तो यहां तक लिखा है कि अब हमने लगभग सब गांवों में पेयजल की समस्या सुलझा ली गई है। इस तरह की घोषणा से बहुत आशा बंधी थी कि चलो हमारी एक अति महत्वपूर्ण कार्य पूर्ण हुआ। पर उसके कुछ ही समय बाद जब गर्मी का मौसम आने पर हजारों गांवों से पानी के गंभीर संकट के सामाचार मिलने लगते थे तो हमारे इस आत्मविश्वास को धक्का लगता था। इस वर्ष भी ऐसा ही हुआ है।

भारत सरकार ने ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम पर एक विशेषज्ञों की समिति नियुक्त की थी जिसने अपनी रिपोर्ट वर्ष 1994 में दी। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट में लिखा कि आरंभ में हमें सरकारी तौर पर यह बताया गया था कि पेयजल की दृष्टि से अब देश में मात्र 750 गांव बचे हैं, किन्तु जब यह समिति अपनी रिपोर्ट को अन्तिम रूप दे रही थी तो उसे नवीनतम सर्वेक्षण के नतीजे पता चले कि उस समय 65,000 समस्याग्रस्त गांव मौजूद हैं। इस तरह के कई उदाहरण हम सरकारी दस्तावेजों से ही दे सकते हैं जिससे पता चलता है कि कम होती यह समस्या अचानक तमाम प्रयासों को अंगूठा दिखाकर फिर बढ़ जाती है और कई बार तो काफी तेजी से बढ़ जाती है। आंकड़ों के इस उलट–फेर के पीछे की हकीकत क्या है?

दरअसल सरकारी प्रयास में प्रायः यह लक्ष्य रखा जाता है कि अमुक गांव में पाइपलाईन बिछानी है, यहां इतने हैंड पंप लगवाने हैं,, यहां टयूबवेल खुदवाना है आदि। जब ये कार्य इंजीनियरिंग दृष्टि से संतोषजनक ढंग से पूरे हो जाते हैं कि वहां का पेयजल संकट दूर हो गया मान लिया जाता है। मान लीजिए एक राज्य के 2,000 गांवों में पेयजल संकट था और वहां 1,500 गांवों में हैडपंप लग गए और 500 गांवों में पाइपलाईन बिछ गई तो उस राज्य से रिपोर्ट आ जाएगी कि अब इस गांव में पेयजल का काई संकट नहीं रहा। किन्तु हैंडपंप तभी असरदार होंगे यदि भूजल

का स्तर ठीक बना रहेगा। यदि भूजल का स्तर नीचे चला गया तो फिर हैडपंप अपनी जगह बने रहेंगे पर उनसे गांव की प्यास नहीं बुझेगी।

हैंडपंप तभी असरदार होंगे यदि भू जल का स्तर ठीक बना रहेगा। यदि भू जल का स्तर नीचे लगा गया तो फिर हैंडपंप अपनी जगह बने रहेंगे पर उनसे गांव की प्यास नहीं बुझेगी।

इसी तरह किसी पहाड़ी क्षेत्र में किसी झरने से पानी को आसपास के कई गांवों तक पहुंचाने की बहुत अच्छी लगने वाली पाइपलाईन की योजना बनाई जा सकती है। इस झरने से पानी भरने कई गांवों की महिलाओं को आना पड़ता है। उन्हें बहुत थकान होती है। अब इससे बढ़िया क्या बात हो सकती है कि पाइपलाईन बिछा कर उनके गांव तक (हो सके तो ठीक उनके घर तक) पानी पहुंचा दिया जाए। इस घोषणा से सभी गांववासी बहुत खुश हैं। देखिए कितनी उमंग से वे पाइपलाईन का बिछना देख रहे हैं। पाइपलाईन बिछ भी गई, उद्घाटन भी हो गया। पर मान लीजिए किसी कारण से यह झरना ही लुप्त हो गया या बहुत पतला पड़ गया तो यह पाइपलाईन बेचारी क्या कर लेगी। तब तो गांव के नल में पानी आएगा ही नहीं या आएगा भी तो बहुत कम।

मूल बात यह है कि यदि जल–स्रोत ही लुप्त होने लगे या भूजल स्तर बहुत नीचे जाने लगे तो केवल इंजीनियरिंग कार्यों से किसी गांव की प्यास नहीं बुझेगी। हमारे अनेक गांवों की एक मुख्य त्रासदी यही है कि भूजल स्तर नीचे जा रहा है या (विशेषकर पर्वतीय गांवों में) झरने व अन्य जल–स्रोत लुप्त हो रहे हैं या पतले पड़ रहे हैं। कई छोटी नदियां गर्मियों के दिनों में पूरी तरह सूख रही हैं। कई जगहों पर नदी के ऊपरी क्षेत्र में उससे उतना पानी नहरों द्वारा मोड़ लिया जाता है कि निचले क्षेत्र के लोग भीषण जल संकट का सामना करने लगते हैं।

पिछले कुछ दशकों में हमारे देश में भूजल के संकट की कहानी को एक ही वाक्य में सारगर्भित किया जा सकता है – बाहर निकालने वाले भूजल की मात्रा को निरंतर बहुत तेजी से बढ़ाया गया और जल संरक्षण द्वारा भूजल आपूर्ति को निरंतर घटाया गया। भूजल निकालने की मात्रा इस कारण बढ़ाई गई कि नई और अधिक मुनाफे वाली फसलों को उगाया जा सके, बागों और प्लांटेशनों को लगाया जा सके और उद्योग तथा खनन के कार्य को तेजी से बढ़ाया जा सके। यहां तक कि जल–अभाव वाले क्षेत्र में भी भारी जल उपयोग वाले उद्योग लगा दिए गए। दूसरी ओर तालाबों के माध्यम से या अन्य परंपरागत विधियों से जो जल संरक्षण का कार्य हमारे पूर्वजों के समय से किया जा रहा था उसकी निरंतर उपेक्षा की गई। साथ ही अधिकांश गांवों में हरियाली भी कम हुई। विशेषकर चौड़े पत्ते वाले वे पेड़ कम हुए जो जल संरक्षण में अधिक सक्षम माने जाते हैं। इसकी जगह यूकेलिप्टरस और पापलर जैसे पेड़ अधिक छाए जो जल संरक्षण तो क्या करते अपनी तेज वृद्धि के लिए अधिक जल सोख कर उन्होंने जल संकट को बढ़ाया।

इन कारणों से भूजल का संतुलन बिगड़ गया और देश के अनेक गांवों में भूजल का स्तर तेजी से नीचे जाने लगा है। काफी मेहनत और खर्च से लगाए गए हैंडपंप निकम्मे सिद्ध होने लगे। कई गांवों में और गहरा खोदने पर भी पानीं नहीं मिला। तीन–चार हैंडपंप लगाने के बाद जिन गांवों को पेयजल की दृष्टि से संतोषजनक घोषित कर दिया गया था, अब उन्हें फिर समस्याग्रस्त गांव की श्रेणी में वापिस भेजना पड़ा। इस तरह समस्याग्रस्त गांवों के जो आंकड़े पहले कम हुए थे वे बढ़ने लगे। पश्चिम बंगाल में जिन गांवों में भूजल स्तर बहुत नीचे चला गया था उनमें से कुछ गांवों में आर्सेनिक (arsenic) के विषैलीकरण की समस्या उत्पन्न होने के कारण स्थिति और भी गंभीर हो गई।

पर्वतीय क्षेत्रों में वन–विनाश का सीधा असर वहां के जल स्रोतों पर पड़ता है। हिमालय में बांज जैसे जो चौड़ी पत्ते वाले वृक्ष हैं, उनकी जल संरक्षण क्षमता बहुत अच्छी मानी गई है। इन वृक्षों द्वारा संरक्षित जल झरनों के रूप में फूट पड़ता है। ये झरने बाद में पहाड़ों में कलकल बहते हैं और कितने ही लोगों की प्यास बुझाते हैं। पर वन काट दिए जाएं या नष्ट हो जाएं तो ऐसे जल–स्रोत भी सूख सकते हैं। ऐसी स्थिति में इनसे घर–घर में जल पहुंचाने वाली पाइपलाईन भी बेकार हो जाती है। कई जगहों पर खनन के

बाहर निकालने वाले भूजल की मात्रा को निरंतर बहुत तेजी से बढ़ाया गया और जल संरक्षण द्वारा भूजल आपूर्ति को निरंतर घटाया गया।

विनाशकारी तरीकों से भी जल–स्रोत नष्ट हो जाते हैं।

कुछ अन्य स्थानों पर जल की कमी तो नहीं होती पर वह बुरी तरह प्रदूषित हो जाता है। कई छोटी नदियों से गांवों में पेयजल उपलब्ध होता है पर जब उसमें किसी उद्योग के अवशिष्ट पदार्थ डाल दिए जाते हैं तो यह पानी मनुष्य तो क्या, पशुओं के भी पीने योग्य नहीं रह जाता है। इसे पीने पर कई पशु मर जाते हैं। उद्योगों द्वारा फैलाए गए प्रदूषण के अतिरिक्त खेतों में रासायनिक खाद और विषैली कीटनाशक खादों के अधिक उपयोग से भी आस–पास के कई जल–स्रोतों में खतरनाक प्रदूषण फैल जाता है। यह खेती के रसायनों वाला प्रदूषण इस कारण भी चिन्ताजनक है कि यह कई बार गांव के भूजल स्तर तक पहुंचकर उसे भी प्रदूषित करने लगता है। इस बढ़ते जल प्रदूषण के कारण भी कई गांव जिनमें पहलें पेयजल की संतोषजनक स्थिति स्थापित हो गई थी, वे फिर से समस्याग्रस्त गांव की श्रेणी में आ सकते हैं।

एक अन्य समस्या टयूबवेल, हैंडपम्प, पाइपलाईन आदि के रख–रखाव से जुड़ी है। कई बार उचित रख–रखाव की व्यवस्था न होने के कारण अच्छी परियोजनाएं भी अपेक्षित लाभ गांववासियों को नहीं दे पाती हैं। कई गांवों में मामूली मरम्मत न होने के कारण भी

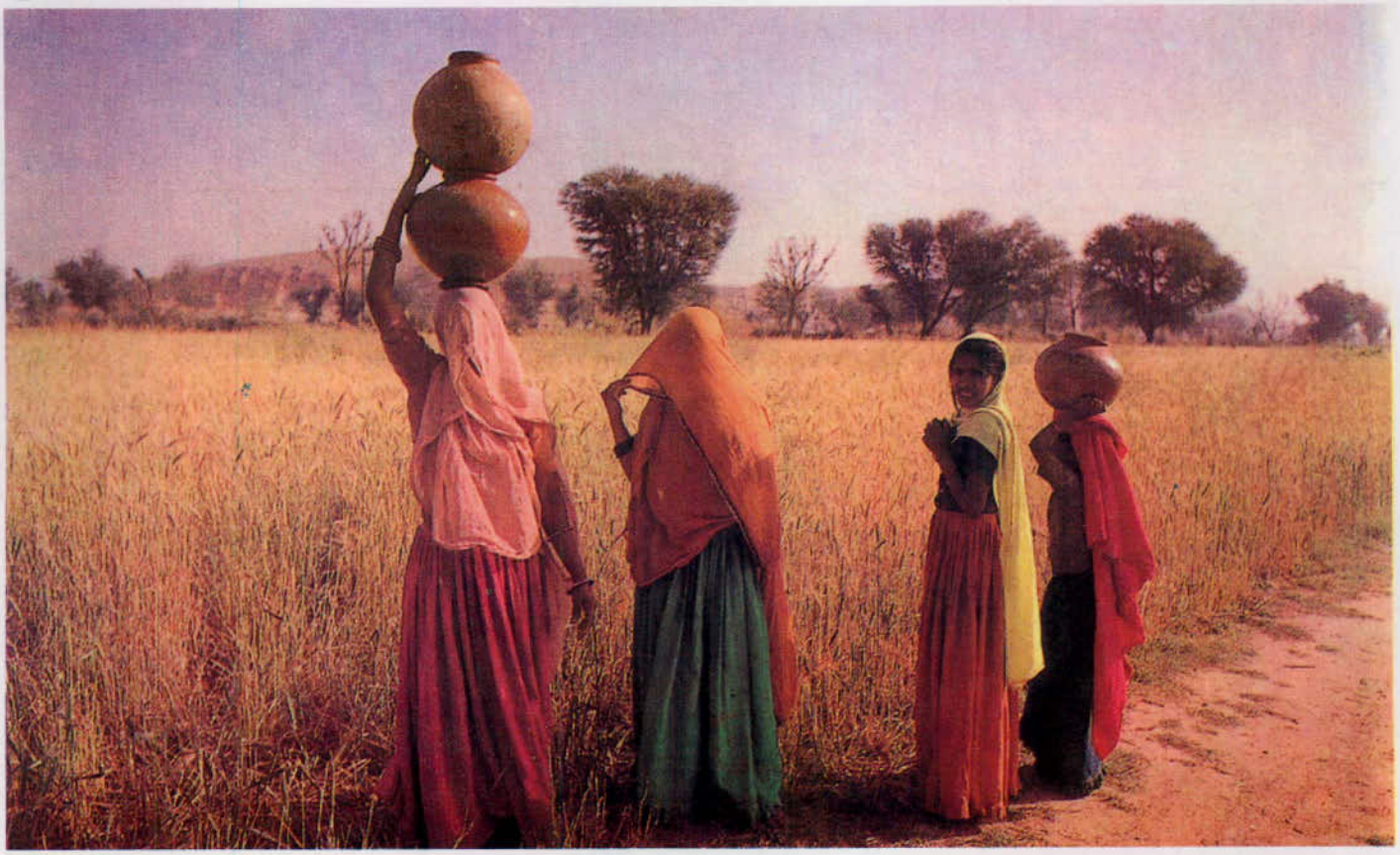

राजस्थान में आज भी पीने का पानी मीलों दूर से लाना पड़ता है

कुछ हैंडपंप बेकार पड़े रहते हैं।

कुछ समय पहले राजस्थान में तिलोनिया स्थित 'सामाजिक कार्य व अनुसंधान केन्द्र' ने हैंडपंप मिस्त्री का एक बहुत सार्थक कार्य आरंभ किया था जिसमें गांववासियों विशेषकर ग्रामीण महिलाओं को अपने आस–पास के हैंडपंपों की मरमत करने के लिए प्रशिक्षण दिया जाता था। मोटर पर दूर से आने वाली तकनीकी कर्मचारियों की टीम के स्थान पर जब गांव के अपने मिस्त्री ने ही यह काम संभाला तो इससे खर्च भी कम हुआ और मरम्मत समय पर भी होने लगी। कुछ अन्य जगहों पर भी यह प्रयोग सफल रहा। राजस्थान सरकार इससे प्रभावित हुई और उसने राज्य के एक बड़े भाग में इस स्कीम को फैलाने के लिए प्रयास किया। किन्तु यह जरूरी नहीं है कि एक छोटे से क्षेत्र में काफी मेहनत और लगन से जिस प्रयास को सफल बनाया गया है उस निष्ठा के अभाव में वह प्रयास बड़े स्तर पर भी सफल हो जाए। इस वर्ष राजस्थान के कई गांवों से हैंडपंप की मरम्मत समय पर न होने के समाचार मिले हैं। अतः यह हैंडपंप मिस्त्री का विचार तो बहुत अच्छा है पर व्यापक स्तर पर इसे सफल बनाने के लिए अभी और प्रयास करने होंगे।

विशेषज्ञों की जिस समिति का ऊपर जिक्र किया गया है, उसने अपनी रिपोर्ट में बताया है कि पहले से लगे पाइपलाईन, हैंडपंप या अन्य संयत्रों के रख–रखाव के लिए गैर–योजना (Non-plan) खर्च की जरूरत होती है जबकि नए हैंडपंप, पाइपलाईन, अन्य संयत्र लगाने के लिए योजना के खर्च (Plan funds) की जरूरत होती है। कई बार पहली तरह के संसाधन नहीं होते हैं जबकि दूसरी तरह के संसाधन उपलब्ध होते हैं। इस स्थिति में यदि पहले से मौजूद पाइपलाईन के लिए 500 रुपये की जरूरत है तो वह इंतजाम नहीं हो पाता है, जबकि नई पाइपलाईन के लिए 30,000 रुपये भी उपलब्ध हो जाते हैं। इस तरह सीमित साधनों का उचित उपयोग नहीं हो पाता है।

उचित रख–रखाव और समय पर मरम्मत की व्यवस्था करने के साथ–साथ हमें पेयजल समस्या के प्रति संकीर्ण दृष्टिकोण को छोड़कर एक व्यापक दृष्टिकोण अपनाना होगा। इस विषय पर केवल इंजीनियरिंग दृष्टिकोण सोचने के स्थान पर पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से सोचना पड़ेगा तभी समस्या के दीर्घकालीन और टिकाऊ समाधान मिल सकेंगे। भूजल का स्तर ठीक रखना है, जल–स्रोत बचाने है, प्रदूषण रोकना है तो पर्यावरण संरक्षण का दृष्टिकोण जरूरी है। कितना दोहन और कितना संरक्षण हो, उसमें संतुलन बिठाना जरूरी है। यदि फसलों में बदलाव हों, नए उद्योग लगने हों तो उनके लिए जरूरी जल के बारे में भी सोचा जाए कि इतना जल वहां है भी कि नहीं। जल के विभिन्न उपयोगों में सबसे ऊंची प्राथमिकता पेयजल को देनी चाहिए। केवल मनुष्यों के नहीं, पशुओं के लिए भी पेयजल उपलब्ध रहे इस पर हमें ध्यान देना चाहिए। इन मूक जीवों को कभी यह शिकायत न हो कि मनुष्य ने उनकी प्यास बुझाने तक पर ध्यान नहीं दिया। ❑

पानी की हर बूंद कीमती

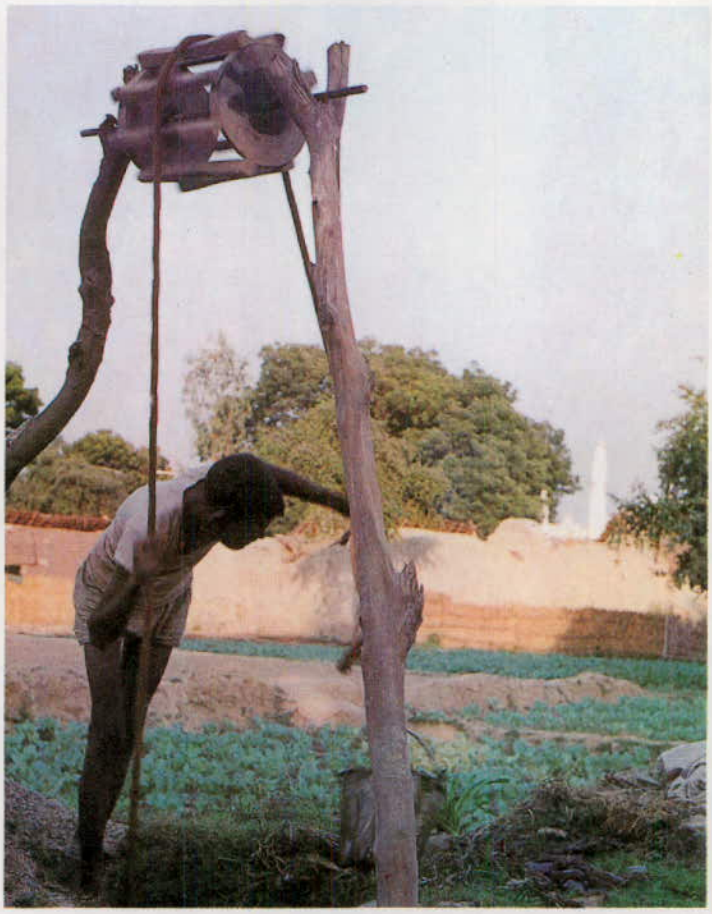

डा. कैलाश चन्द्र पपनै*

भारत में जल संसाधनों की उपलब्धता में भारी असंतुलन है। जहां देश के पूर्वी भाग के ब्रह्मपुत्र नदी के बेसिन में 40 प्रतिशत जल, देश के 5.9 प्रतिशत भू–भाग और 3.2 प्रतिशत जनसंख्या के लिए उपलब्ध है, वहां राजस्थान के हिस्से में देश का मात्र एक प्रतिशत जल उपलब्ध है जबकि वहां देश की आठ प्रतिशत आबादी रहती है। फिर जल–प्रबंधन के प्रति उपेक्षा–भाव ने देश में जल संकट को बढ़ा दिया है। हमने अपने सारे साधन भू–जल के दोहन में झोंक दिए हैं। इससे देश के अनेक भागों में जल–स्तर नीचे चला गया है। अब जरूरत इस बात की है कि न केवल जल स्रोतों का संरक्षण कुशलतापूर्वक किया जाए बल्कि जल को प्रदूषित होने से भी बचाया जाए ताकि जल संकट बार–बार पैदा न हो।

देश के कुछ राज्यों में चल रहे जल संकट ने एक बार फिर इस धारणा को गलत सिद्ध कर दिया है कि भारत में पानी की कोई कमी नहीं है। गुजरात, राजस्थान और आंध्र प्रदेश में पेयजल का जैसा संकट चल रहा है उसमें यह कहना अनुचित नहीं होगा कि इन प्रदेशों के सूखाग्रस्त क्षेत्रों में लोग पानी की बूंद–बूंद के लिए तरस रहे हैं। इस संकट ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि पानी प्रकृति का मुफ्त उपहार नहीं है। इसकी कीमत है और यह समझना होगा कि यह सचमुच बहुमूल्य है। पानी की उपलब्धता देश के अलग–अलग भागों में भिन्न–भिन्न है। देश के उत्तरी भाग में गंगा क्षेत्र और उत्तर पूर्व में बह्मपुत्र क्षेत्र में देश के 77 प्रतिशत जल संसाधन फैले हुए हैं जबकि देश के पूर्वी भाग की बहने वाली नदियों में 14 प्रतिशत, पश्चिम क्षेत्र की तरफ बहने वाली नदियों में 5 प्रतिशत, तथा केरल क्षेत्र में सिर्फ 3 प्रतिशत जल संसाधन हैं। देश में जल संसाधनों के वितरण के ब्योरे पर नजर डालने से पता चलता है कि इसमें भारी क्षेत्रीय असमानता है। 1991 की जनसंख्या के आधार पर गणना करने पर पता चलता है कि पानी की प्रति व्यक्ति वार्षिक उपलब्धता का औसत 2214 घन मीटर प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष है। वितरण की असमानता इस बात से स्पष्ट हो जाती है कि ब्रह्मपुत्र नदी बेसिन में जल उपलब्धता 18,470 घन मीटर है तो पूर्व की तरफ बहने वाली नदियों के बेसिन में पन्नार व कन्याकुमारी के बीच जल की उपलब्धता सिर्फ 383 घन मीटर प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष तक सीमित है। यद्यपि राजस्थान में देश की आबादी का आठ प्रतिशत हिस्सा रहता है परन्तु राज्य को प्रकृति ने देश के जल संसाधनों का सिर्फ एक प्रतिशत भाग दिया है। इसके परिणामस्वरूप राजस्थान में प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष की जल उपलब्धता 562 घन मीटर की है जिसका अर्थ है कि जल की दृष्टि से यह अन्यंत अभाव का क्षेत्र है। भूमि सतह के उपयोग योग्य जल का लगभग 40 प्रतिशत

* विशेष संवाददाता, हिन्दुस्तान

हिस्सा गंगा–ब्रह्मपुत्र–मेघना नदी क्षेत्र में है जोकि देश के भू–क्षेत्र के 5.9 प्रतिशत हिस्से और देश की आबादी के 3.2 प्रतिशत हिस्से के नसीब में है। अकेले ब्रह्मपुत्र के उप–बेसिन में देश के वार्षिक जल संसाधन का 29 प्रतिशत हिस्सा है। ब्रह्मपुत्र बेसिन क्षेत्र को छोड़ दिया जाए तो पूरे देश के लिए उपलब्ध प्रति व्यक्ति औसतन जल उपलब्धता लगभग 1500 घन मीटर है।

प्रति व्यक्ति औसत जल उपलब्धता की दृष्टि से 1990 में भारत 100 देशों की सूची में 42वें स्थान पर था। 1991 की जनसंख्या के आधार पर देश में प्रतिव्यक्ति औसत प्रतिवर्ष जल उपलब्धता 2214 घन मीटर थी जबकि जल उपलब्धता का विश्व औसत 9231 घन मीटर का था। विश्व भर में पुनः नवीकरण

केरल में यदि सात प्रतिशत लोगों को पूरी तरह से सुरक्षित जल मिल पाता है तो बिहार में लगभग 80 प्रतिशत को सुरक्षित जल मिलता है। पंजाब में 61 प्रतिशत लोग ऐसे हैं जिन्हें सुरक्षित पेयजल मिल पाता है।

योग्य जल संसाधनों की मात्रा 42,700 घन किलोमीटर आंकी गई है। इसमें से एशिया क्षेत्र में 13,500 घन किलोमीटर की उपलब्धता आंकी गई है। जनसंख्या वृद्धि के कारण इसमें पर्याप्त कमी आई है। अनुमान है कि जनसंख्या दबाव के चलते भारत में प्रति व्यक्ति वार्षिक जल उपलब्धता का औसत से घटकर आधा रह जाएगा।

अनुमान है कि वर्तमान में गांवों की 90 प्रतिशत जल आपूर्ति भू–जल स्रोतों से होती है। शहरी और औद्योगिक क्षेत्र की जल आवश्यकताओं की 50 प्रतिशत आपूर्ति भू–जल स्रोतों से होती है। कृषि क्षेत्र में भी सिंचाई की 50 प्रतिशत आवश्यकता भू–जल से ही पूरी होती है।

देश में आजादी के समय प्रति व्यक्ति पुनः नवीकरण योग्य जल की उपलब्धता 6,000 घन मीटर थी जो गिरकर अब 1,200 घन मीटर के स्तर पर आ गई है। इसके इस्तेमाल की दृष्टि से भी भारत बहुत पीछे है। भारत पुनः नवीकरण योग्य जल भंडार के सिर्फ 18 प्रतिशत हिस्से का इस्तेमाल कर पाता है जबकि इजराइल द्वारा 86 प्रतिशत जल का उपयोग किया जाता है। यह विरोधाभासपूर्ण स्थिति तब है जबकि इजराइल और भारत की परिस्थितियों में भी बहुत अंतर है। उपभोग स्तर का यह अंतर यह भी दिखाता है कि जल संसाधनों का संरक्षण और समझदारी के साथ उपभोग समय की मांग है।

पिछले चार दशकों में देश में भू–जल निकासी पर बहुत जोर दिया गया है। इस स्रोत के अत्यधिक दोहन ने भी जल संकट को जन्म दिया है। तर्कसंगत तो यही है कि जमीन से उतना ही पानी निकाला जाना चाहिए जिसकी पूर्ति वर्षा जल से हो सके। उससे अधिक पानी निकालने का अर्थ है कि भावी पीढ़ियों को पानी के अकाल की तरफ धकेला जा रहा है। भू–जल की वर्षा के पानी से प्रतिपूर्ति के मार्ग में कई कृत्रिम अवरोध पैदा कर दिए गए हैं। वनों और वनस्पति का विनाश इसका प्रमुख कारण है। वन क्षेत्र सिकुड़ जाने से जमीन के नीचे वर्षा जल के रिसाव में कमी आई है और कई क्षेत्रों में बाढ़ की विभीषिका उत्पन्न हुई है। जल प्रणाली को असंतुलन बनाने में नलकूपों के अंधाधुंध इस्तेमाल की भूमिका भी है।

भू–जल विशेषज्ञों का अनुमान है कि देश में 43.2 करोड़ घन मीटर का ऐसा भू–जल भंडार है जिसकी प्रतिपूर्ति वर्षा जल से करना संभव है। इसके अलावा भी 19 करोड़ घन मीटर पानी को विशेष प्रयासों द्वारा भू–जल भंडार में जोड़ा जा सकता है। अनुमान है कि इसके अलावा भी जमीन के नीचे 108 करोड़ घन मीटर का जल भंडार है। इसका अर्थ है कि भारत में कुल 170 करोड़ घन मीटर का भू–जल भंडार है।

देश में भू–जल दोहन की कितनी खुली छूट रही है इसका पता निम्नलिखित तालिका से चलता है। तालिका में विभिन्न वर्षों में गहरे नलकूपों, निजी नलकूपों, सार्वजनिक नलकूपों तथा विद्युत व डीजल चालित पम्प सेटों की संख्या में हुई बढ़ोतरी स्पष्ट देखी जा सकती है। इनके कारण प्राप्त हुई सिंचाई क्षमता भी तालिका के अंतिम स्तंभ में करोड़ हेक्टेयर की इकाई में दी गई है।

भू–जल दोहन के लिए संसाधन भी बहुत झोंके गए हैं। अनुमान है कि लघु सिंचाई क्षेत्र के लिए आबंटित राशि का 20 प्रतिशत हिस्सा और संस्थागत वित्त का 90 प्रतिशत से अधिक हिस्सा भू–जल के दोहन में इस्तेमाल हुआ है। इसके अलावा निजी स्तर पर भी संसाधन इस तरीके से जल दोहन के लिए लगाए गए हैं। अनुमान है कि आठवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि में 1465 करोड़ रुपये की योजना राशि, 5119 करोड़ रुपये का संस्थागत वित्त तथा 1400 करोड़ रुपये का निजी निवेश

तालिका
भूजल निकासी उपकरण संख्या (हजारों में) तथा सिंचाई क्षमता करोड़ हेक्टेयर में

वर्ष	गहरे नलकूप	निजी नलकूप	सार्वजनिक नलकूप	योग	पम्प सेट		भू–जल से प्राप्त सिंचाई क्षमता
					विद्युत चालित	डीजल चालित	
मार्च 1951	3860	3	2.4	3865.4	21	66	.65
मार्च 1980	7786	2132	33.3	9951.3	3965	2650	2.20
मार्च 1985	8742	3359	46.2	12147.2	5709	3550	2.78
मार्च 1990	9407	4754	63.6	14224.6	8358	4365	3.56
मार्च 1992	10120	5379	67.6	15566.6	9391	4585	3.89
मार्च 1997	10501	6743	90.0	17334.0	–	–	4.57

भूजल दोहन के क्षेत्र में लगा। भूजल दोहन के लिए 1992 से 1997 के बीच की इस अवधि में सरकार ने भी 635 करोड़ रुपये सब्सिडी के रूप में खर्च किए। भूजल विकास की विभिन्न मदो पर होने वाला खर्च पहली पंचवर्षीय योजना (1951–56) के 66 करोड़ रुपये के स्तर से बढ़कर आठवीं योजना (1992–97) में 8,000 करोड़ रुपये के स्तर तक जा पहुंचा है।

इतने विशाल निवेश की मदद से भूजल दोहन का परिणाम है कि अनेक स्थानों पर भूजल के स्तर में भारी गिरावट आई है। केन्द्रीय भूमि जल बोर्ड के अध्ययन के अनुसार 14 राज्यों के 138 जिलों में भू–जल स्तर में 4 मीटर से अधिक की गिरावट आई है जो कि चिन्ताजनक है। विश्व बैंक द्वारा पिछले दिनों भू–जल नियमन व प्रबंधन के बारे में जारी की गई एक रिपोर्ट के अनुसार भू–जल के अत्यधिक दोहन से कम जल वाले अनेक क्षेत्रों में जल की शुद्धता पर भी बुरा असर पड़ा है। वर्ष 1984–85 से 1992–93 की अवधि में संकटग्रस्त होते जा रहे ब्लाकों की संख्या 5.5 प्रतिशत की दर से बढ़ती रही है। यदि भू–जल के इस्तेमाल का नियमन और उपयुक्त प्रबंधन नहीं किया गया तो अगले 20 वर्षों में देश के 35 प्रतिशत से अधिक ब्लाकों में गंभीर जल संकट खड़ा हो जाएगा। पेय जल से लेकर विकास कार्यों तक के लिए जल की आवश्यकता को देखते हुए अब जल संसाधनों के विकास से भी ज्यादा जरूरत इस बात की है कि वर्तमान जल स्रोतों की सुरक्षा पर तथा प्रभावी जल प्रबंधन की जरूरतों पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए।

ग्रामीण विकास मंत्रालय के एक अध्ययन के अनुसार 30 नवम्बर 1998 को देश की 63,408 बस्तियों में पेय जल की सुविधा नहीं थी जबकि 3,13,266 बस्तियों में आंशिक रूप से ही इसकी व्यवस्था थी। अध्ययन के अनुसार 10,53,999 बस्तियों में पूरी तरह से पेय जल की व्यवस्था थी। इस अध्ययन में एक दिलचस्प बात यह भी उभर कर आई कि प्रतिवर्ष 90,000 बस्तियां विभिन्न कारणों से फिर से पूर्णतः पेयजल व्यवस्था से वंचित हो जाती हैं या आंशिक रूप से वंचित हो जाती हैं। इसका प्रमुख कारण भू–जल का स्तर गिरना या भंडार का समाप्त होना होता है। इसके अलावा पानी में आर्सेनिक व फ्लोराइड तत्वों की उपस्थिति के कारण भी पानी इस्तेमाल के योग्य नहीं रह पाता है और रख–रखाव की उपेक्षा के कारण भी पेयजल आपूर्ति व्यवस्था ठप्प पड़ जाती है।

देश की जल संबंधी आवश्यकताओं को देखते हुए 1987 में राष्ट्रीय जल नीति की घोषणा की गई। इस नीति में जल संसाधन

हैंड पम्पों का रख–रखाव स्थानीय स्तर पर करने की व्यवस्था होनी चाहिए

प्रबंधन की बात करते हुए घरेलू जल आपूर्ति को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई थी। भूजल संसाधनों की रक्षा के लिए मानक डिजाइन तैयार करने की बात कही गई। इसके अलावा जल की गुणवत्ता पर निगाह रखने की भी बात इसमें शामिल थी।

यद्यपि गांवों में 85 प्रतिशत आबादी को स्वच्छ पेयजल मिलने की बात कही जाती है परन्तु पेयजल सुविधा के वितरण में भारी असमानता है। केरल में यदि सात प्रतिशत लोगों को पूरी तरह से सुरक्षित जल मिल पाता है तो बिहार में लगभग 80 प्रतिशत को सुरक्षित जल मिलता है। पंजाब में 61 प्रतिशत लोग ऐसे हैं जिन्हें सुरक्षित पेयजल मिल पाता है।

समस्त ग्रामीण जनता को पेय जल सुविधा देने व जल प्रदाय व्यवस्था की देखभाल ठीक रखने के लिए कम से कम 170 से 200 अरब रुपये तक के निवेश की आवश्यकता होगी।

भू–जल के अत्यधिक दोहन के परिणाम–स्वरूप पानी में फ्लोराइड और आर्सेनिक जैसे प्राकृतिक प्रदूषकों और कीटनाशकों जैसे रासायनिक प्रदूषकों की मात्रा बढ़ रही है। दुर्भाग्य की बात यह है कि इसमें से अनेक प्रदूषक तत्वों की पुख्ता वैज्ञानिक जांच और पुष्टि करना भी प्रायः संभव नहीं हो पाता है। भारत सरकार के एक सर्वेक्षण के अनुसार पश्चिम बंगाल में लगभग 1,000 बस्तियों रहने वाले लोग पानी में आर्सेनिक की मौजूदगी से प्रभावित हैं। आंध्र प्रदेश, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश की कुल 28,000 बस्तियों में 1.4 करोड़ लोग पानी में फलोराइड तत्व की मौजूदगी का सामना कर रहे हैं। देश के पूर्वोत्तर क्षेत्र तथा पूर्वी भागों में जल में लौह तत्व की अधिकता पाई जाती है जिससे 58,000 बस्तियों में 2.9 करोड़ लोग प्रभावित हैं। गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, पंजाब, राजस्थान और तमिलनाडु में पानी में खारेपन की समस्या गंभीर है।

गांवों में जल आपूर्ति के लिए नलों द्वारा पानी पहुंचाने का काम भी किया गया है परन्तु उसे संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है। विश्व बैंक की ताजा रिपोर्ट के अनुसार 1996 में किए गए एक नमूना सर्वेक्षण में पता चला कि चुने हुए जिलों में से 24 प्रतिशत में संतोषजनक पेयजल व्यवस्था नहीं थी। इनमें से 32 प्रतिशत में निर्माण की खामियां थीं। प्रारम्भिक डिजाइन में ही कमी रहने के कारण कई स्थानों पर पाइप टूट गए थे और लगभग 25 प्रतिशत पाइपों की मरम्मत अभी होनी थी।

सार्वजनिक कोष से पेयजल अपूर्ति का 95 प्रतिशत हिस्सा हैंड पम्पों पर खर्च किया जाता है। इससे 39.5 करोड़ लोगों को पानी मिलता है जो कि गांवों की आबादी का 75 प्रतिशत हिस्सा है। इन हैंड पम्पों का रख–रखाव प्रायः स्थानीय स्तर पर किया जाता है। परन्तु एक समस्या है कि इनमें से काफी पम्प एक समय बाद खराब हो जाते हैं तो फिर इस्तेमाल नहीं होते। सर्वेक्षण के अनुसार 22.2 प्रतिशत हैंड पम्पों की मरम्मत की जरूरत थी तो 12.3 प्रतिशत इस्तेमाल होने बंद हो चुके थे। इसके बावजूद यह निश्चित है कि भारत के ग्रामीण क्षेत्रों को अपनी पेयजल आवश्यकताओं के लिए मुख्य रूप से भू–जल पर ही निर्भर रहना पड़ेगा। गांवों की सार्वजनिक जल आपूर्ति व्यवस्था की भी भू–जल पर निर्भरता 85 प्रतिशत की है।

यद्यपि काफी हद तक गांवों को पेय जल प्रणाली के दायरे में लाया जा चुका है परन्तु पाइप से भी पेयजल आपूर्ति किए जाने के कारण प्रति व्यक्ति खर्च का औसत निरन्तर बढ़ रहा है। समस्त ग्रामीण जनता को पेय जल सुविधा देने व जल प्रदाय व्यवस्था की देखभाल ठीक रखने के लिए कम से कम 170 से 200 अरब रुपये तक के निवेश की आवश्यकता होगी। परन्तु यदि निर्धारित राष्ट्रीय लक्ष्यों के अनुरूप प्रति व्यक्ति 40 लीटर प्रतिदिन की दर से पानी देने की व्यवस्था करनी हो तो फिर दस वर्षों तक प्रति वर्ष 16 से 18 अरब रुपयों का निवेश करना होगा।

जल स्रोतों के दोहन व उनके विकास के लिए निवेश से भी आगे बढ़कर जरूरत इस बात की है कि भू–जल व अन्य जल स्रोतों का संरक्षण किया जाए और उन्हें प्रदूषण से बचाया जाए। यद्यपि देश में उपलब्ध भू–जल के 45 प्रतिशत हिस्से की प्रतिपूर्ति वर्षा जल से संभव है परन्तु यह बात चिन्ताजनक है कि देश के कुल 4,272 ब्लाकों में से 311 में 100 प्रतिशत तक भू–जल का दोहन किया जाता है। इसके अलावा 160 अन्य ब्लाकों में 85 प्रतिशत तक भू–जल दोहन किया जा रहा है। इसका परिणाम यह है कि इन इलाकों में भू–जल के स्तर में बहुत गिरावट आई है। यही वजह है कि कुएं सूख जाते हैं व हैंड पम्प और ट्यूबवेल काम करना बंद कर देते हैं। अनुमान है कि किसी भी इलाके में पानी के विभिन्न उपयोगों की दृष्टि से हर साल प्रति व्यक्ति 1,700 घन मीटर ताजा पानी की जरूरत होती है। देश की आबादी की वृद्धि व जनसंख्या नियंत्रण के उपायों को देखते हुए सन् 2025 तक देश की आबादी 130 करोड़ हो जाएगी, देश में अभी नदियों, तालाबों और भूमिगत जल स्रोतों से कुल 1,130 घन किलोमीटर जल उपलब्ध है जबकि जरूरत 2,210 घन किलोमीटर की आंकी गई है। इसका अर्थ है कि देश को जरूरत की तुलना में 51 प्रतिशत आपूर्ति से ही काम चलाना होगा। इससे स्पष्ट है कि आने वाले वर्षों में जल संसाधनों का संरक्षण और कुशल प्रबंधन कितना अनिवार्य बन जाएगा। इसके लिए हमें एक बार फिर जल संचय व प्रबंधन की प्राचीन स्वदेशी परम्पराओं पर ध्यान केन्द्रित करना होगा। ❑

यद्यपि देश में उपलब्ध भू–जल के 45 प्रतिशत हिस्से की प्रतिपूर्ति वर्षा जल से संभव है परन्तु यह बात चिन्ताजनक है कि देश के कुल 4,272 ब्लाकों में से 311 में 100 प्रतिशत तक भू–जल का दोहन किया जाता है। इसके अलावा 160 अन्य ब्लाकों में 85 प्रतिशत तक भू–जल दोहन किया जा रहा है।

जल संच

राजस्थान, गुजरात और आंध्र प्रदेश में इस वर्ष जल संकट पैदा हुआ है। इस बारे में चेतावनी पहले ही मिल गई थी। लेखक का कहना है कि अगर समय रहते एहतियाती उपाय कर दिए गए होते तो इस स्थिति से बचा जा सकता था। ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल उपलब्ध कराने के लिए सत्तर के दशक से ध्यान दिया जा रहा है, लेकिन अपेक्षित सफलता नहीं मिल पाई है। इस समस्या से निपटने के लिए लेखक ने सुझाया है कि समस्याग्रस्त क्षेत्रों में जल प्रबंधन के परम्परागत तरीकों और आधुनिक प्रौद्योगिकी दोनों को ही अपनाया जाना चाहिए। तालाबों, कुओं, बावड़ियों और झीलों में पानी इकट्ठा करने की जिम्मेदारी स्थानीय लोगों को सौंपी जाए। वनों का रख–रखाव भी उनके जिम्मे हो तो समस्या की गम्भीरता को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

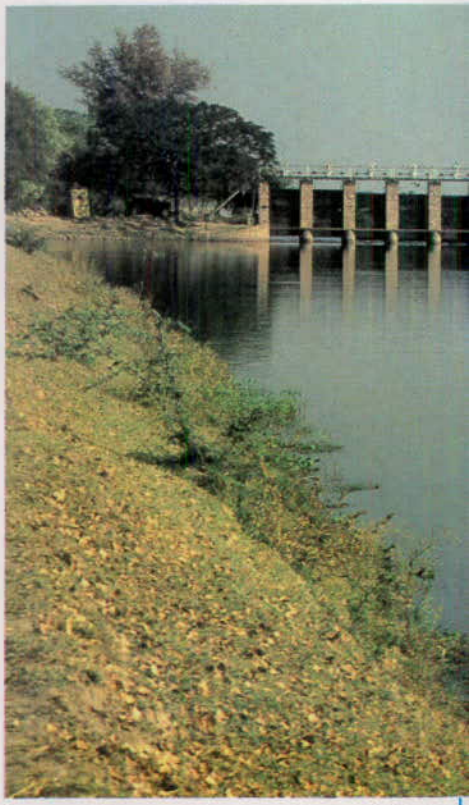

सूखे से विचलित राजस्थान, गुजरात, आंध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश सरकारों की गुहार के बाद प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने सहायता का वचन तो दिया ही, राष्ट्र के नाम अपील भी जारी की। प्रधानमंत्री ने बताया कि "पांच करोड़ से भी अधिक लोग सूखे की चपेट में हैं। प्रभावित जनसंख्या और मवेशियों की भोजन और चारे की आवश्यकता की तुलना में हमारे – सरकार – के साधन कम हैं। इस कमी को दूर करने में आप प्रधानमंत्री सहायता निधि में धन देकर हमारी मदद कर सकते हैं।" उन्होंने याद दिलाया कि "गत वर्ष तटवर्ती उड़ीसा में सुपर साइक्लोन की तबाही की चुनौती का सामना करने में हमें आपकी सहायता के कारण सफलता मिली थी।"

केन्द्र सरकार ने राजस्थान और गुजरात के विशेष रूप से संकटग्रस्त इलाकों में रेलगाड़ी से पानी और चारा पहुंचाने की व्यवस्था करने का आश्वासन दिया। प्रभावित क्षेत्रों के लिए प्रति परिवार 20 किलो प्रतिमास के हिसाब से अतिरिक्त अनाज मुहैया कराने की भी व्यवस्था की गई। काम के बदले अनाज देने के लिए गेहूं और चावल दिया जाएगा। यह सारा अनाज उसी रियायती दर पर मिलेगा जो गरीबी रेखा से नीचे वालों के लिए तय की गई।

सुपर साइक्लोन को प्राकृतिक आपदा कहा जा सकता है, लेकिन मौजूदा सूखा काफी कुछ मानव–निर्मित है क्योंकि सूखा – बहुल क्षेत्रों में जल और भूमि प्रबंधन की जो आदर्श व्यवस्था होनी चाहिए वह नहीं की जा सकी है। पश्चिमी राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश तथा अन्य राज्यों के सूखा बहुल क्षेत्रों की जानकारी सभी को है। सूखा बहुल क्षेत्रों, मरुभूमि विकास, पेयजल मिशन, त्वरित जलापूर्ति, बंजरभूमि विकास से संबंधित कार्यक्रम और परियोजनाएं अनेक राज्यों में सरकारी खर्चे से चलाई जा रही हैं। हर साल इन पर अरबों रुपये खर्च हो रहे हैं। लेकिन उनका कारगर असर यत्र–तत्र ही दिखाई पड़ता है। आजादी मिलने के 53 वर्ष बाद भी देश की पांच प्रतिशत से अधिक आबादी को पेयजल का अभाव हो, फसलें सूखें, मवेशियों को चारा न मिले और लाखों लोगों को कुछ समय के लिए ही सही गांव छोड़ना पड़े तो यह राष्ट्रीय शर्म का विषय है।

यथेष्ट मात्रा में पानी की उपलब्धि मानव–जीवन के लिए ही नहीं, खेती, पशुपालन और औद्योगिक प्रगति के लिए आवश्यक है। कोई भी सभ्यता इनके संतुलित और सार्थक विकास के बिना न तरक्की कर सकती है और न टिकी रह सकती है।

राजस्थान, गुजरात और आंध्र प्रदेश में 1999 में 24 से 59 प्रतिशत वर्षा कम हुई थी। भारतीय मौसम विभाग ने सितंबर में गुजरात, तमिलनाडु और राजस्थान में वर्षा की कमी की ख़बर सरकार को दी थी। सौराष्ट्र और कच्छ के इलाकों में वार्षिक औसत की तुलना में 59 प्रतिशत पानी कम बरसा था। हैदराबाद स्थित राष्ट्रीय दूर संवेदन एजेंसी ने खरीफ की फसल कटने के बाद उपग्रह से प्राप्त चित्रों का विश्लेषण करके राज्य सरकारों को बता दिया था कि इन राज्यों के बड़े भू–भागों में वनस्पति की हरियाली में दो–तिहाई की कमी दर्ज की गई है। यह जानकारी मिलने के बाद राज्य सरकारों ने कोई एहतियाती कार्रवाई या समस्या का सामना करने की योजना नहीं बनाई।

इस वर्ष अप्रैल में गर्मियां शुरू होते ही पश्चिमी राजस्थान, गुजरात और आंध्र प्रदेश के कई जिले जलाभाव के प्रभाव से त्रस्त होकर त्राहि–त्राहि करने लगे तो राज्य सरकारें जागीं। बाड़मेर, जैसलमेर और नागौर आदि जिलों में मवेशी भूखे–प्यासे मरने लगे तथा लोग चारे–पानी की खोज में गांव छोड़कर जाने लगे तो केंद्र सरकार से राहत कार्य के लिए मदद मांगी जाने लगी। गुजरात में भी यही हुआ। जब कच्छ और सौराष्ट्र प्रायद्वीप में पानी के लिए दंगे शुरू हो गए, पुलिस को गोलियां दागनी पड़ीं, कुएं और नलकूप सूखने

...ते आती है हरियाली

जितेन्द्र गुप्त

लगे तब सरकारी हलकों में हडकंप मचा। हजारों कुएं और नलकूप लगाने, गांवों में टैंकरों से पानी पहुंचाने का आदेश हुआ और केंद्र सरकार से हर तरह की मदद मांगी गई।

आंध्र प्रदेश के सूखाग्रस्त जिलों में पेयजल का विशेष अभाव भले ही न हो, औसत से कम वर्षा के कारंण फसलें मारी गईं। कर्ज अदा न कर सकने वाले किसानों ने आत्महत्या का रास्ता अख्तियार किया। महबूब नगर जिले के एक तालुके से 19 किसानों को अपने बचाव का यही रास्ता सूझा, हालांकि ऐसा करके वे अपने परिवार को बंधुआ मजदूर बनने के लिए छोड़ गए। हजारों किसान कर्ज के दलदल में फंस जाएंगे।

केंद्र सरकार ने आंध्र, गुजरात और राजस्थान सरकारों के लिए लगभग एक हजार करोड़ रुपये दिए हैं। इसमें से 500 करोड़ रुपये आंध्र प्रदेश के हिस्से में आए हैं।

महाराष्ट्र में राजस्थान और गुजरात अथवा आंध्र प्रदेश जैसी पानी की तंगी नहीं है। राज्य के जल आपूर्ति मंत्री श्री पाटील ने मई जून में 11,000 गांवों को पेयजल का अभाव होने की संभावना व्यक्त की है। 15 अप्रैल के आस पास राज्य के 336 गांवों में टैंकरों से पानी पहुंचाया जा रहा था। इस प्रदेश में जहां मामूली वर्षा होती है वहां अतिशय पानी मांगने वाले गन्ने की खेती की जाती है। यह काम साधारण जनों के पेयजल स्रोत पर डाका डालने के बराबर है। गर्मी अधिक पड़ने पर तमिलनाडु में भी पेयजल संकट अपने पंख पसार सकता है।

जलभाव अथवा जलप्रबंधन के संदर्भ में कुछ बातों को भुला देने या व्यवहार में उनको समुचित महत्व न देने के कारण राज्य संचालित कार्यक्रमों का वांछित फल नहीं मिलता। वर्षा का वह पानी जो झीलों, तालाबों में संचित नहीं होता, वह मिट्टी काटते हुए नदी–नालों की मार्फत सागर में पहुंच जाता है। जलाशयों में संचित जल रिस कर भूगर्भीय जलाशयों को भरता है और उनके जल स्तर को बरकरार रखता है। वनों और वनस्पति से आच्छादित भूमि पर बरसे पानी को भी जमीन सोखती है जो भूगत जलाशयों में पहुंचता है और हरियाली वाले क्षेत्र में साल भर नमी बनी रहती है। इस प्राकृतिक जलाशय को समाप्त करके या जलाशय न बना कर अथवा काटे गए पेड़ों की जगह नए पेड़ न लगाकर प्राकृतिक जल चक्र को अवरुद्ध कर दिया जाए तो बढ़ती हुई जरूरतों के लिए पानी की कमी होगी ही।

दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य है कि मानसून मनमौजी है। कब कितने दिन तक किस भू–भाग में लगभग औसत वर्षा होगी अथवा नहीं होगी, यह पक्के तौर पर नहीं कहा जा सकता। खासकर अल्पवृद्धि वाले क्षेत्रों में जब औसत से काफी कम वर्षा होती है तो सूखा पड़ जाता है। बाढ़ और सूखा मानसून की प्रकृति के हिस्से हैं। इसे ध्यान में रखकर ही जल और भूमि प्रबंधन की योजनाएं बनाई जानी चाहिए।

1987 में राष्ट्रीय जल नीति निरूपित की गई थी। इसमें कहा गया था कि जल संसाधनों की योजनाएं और विकास कार्य राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य के अनुसार निरूपित होने चाहिए। केन्द्रीय जल संसाधन मंत्रालय को यह भी ज्ञात है कि किन क्षेत्रों में भू–गर्भ जल का अतिशय दोहन हो रहा है। लेकिन राज्य स्तर पर सोच विचार के ठोस नतीजे अभी तक सामने नहीं आए हैं।

सन् 70 के दशक में ग्रामवासियों की जरूरतों की ओर विशेष रूप से ध्यान दिया जाने लगा। 1972–73 में त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम शुरू हुआ, जिसे 1986 में मिशन का दर्जा मिल गया ताकि वह अधिक कारगर हो सके। 1991 में उसे राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन की संज्ञा दे दी गई। ग्रामीण जल आपूर्ति की व्यवस्था राज्य के कार्यक्षेत्र में आती है, लेकिन केंद्र सरकार विभिन्न परियोजनाओं के लिए वित्त मुहैया कराती है। नए मार्गदर्शक सिद्धांतों में स्थानीय समूहों की सक्रिय भागीदारी पर विशेष बल दिया गया है।

इसके अलावा और भी कई कार्यक्रम हैं जिनमें जल–संसाधनों का विकास शामिल है। 1973–74 में सूखा बहुल क्षेत्र कार्यक्रम आरंभ हुआ। इसके अधीन 13 राज्यों के 155 जिलों में काम हो रहा है। 947 खंडों के

साढ़े सात लाख वर्ग किलोमीटर में कार्यक्रम का फैलाव है। रेगिस्तानों के विस्तार की प्रवृत्ति की रोकथाम के लिए मरुभूमि विकास कार्यक्रम (1977–78) है और 1989–90 से बंजरभूमि के विकास के लिए एक अलग कार्यक्रम चालू है। सूखे के प्रतिकूल प्रभाव को रोकने में कार्यक्रम का असर बहुत उत्साहवर्धक

आजादी मिलने के 53 वर्ष बाद भी देश की पांच प्रतिशत से अधिक आबादी को पेयजल का अभाव हो, फसलें सूखें, मवेशियों को चारा न मिले और लाखों लोगों को कुछ समय के लिए ही सही गांव छोड़ना पड़े तो यह राष्ट्रीय शर्म का विषय है।

नहीं रहा इसलिए ग्रामीण विकास मंत्रालय की रिपोर्ट (1999–2000) के अनुसार हनुमंथैया समिति की सिफारिश पर तय किया गया कि वाटरशेड विकास कार्यक्रम के लिए निर्धारित मानदंड सामान्यतः सूखा बहुल क्षेत्र, और मरुभूमि विकास कार्यक्रम तथा बंजरभूमि विकास कार्यक्रमों पर भी लागू होंगे। रिपोर्ट में एक अन्य स्थान पर बताया गया है कि वाटरशेड विकास योजनाओं को अपेक्षित सफलता क्यों नहीं मिल पाती। मसलन एक विभाग या अधिकारी एक ही तरह के कार्य–कलापों को विभिन्न मार्गदर्शी सिद्धांतों के अनुरूप करता है, जिला ग्रामीण एजेंसियों के कार्यान्वयन और पंचायत की भूमिका और उत्तदायित्व में समन्वय नहीं रहता, अधिकारियों के बार–बार बदलते रहने से प्राथमिकताएं बदलती रहती हैं, राज्यों और संबंधित विभागों के अधिकारियों का कार्यक्रमों से जुड़ाव नहीं होता क्योंकि कार्यक्रमों को ग्रामीण विकास एजेंसी की जिम्मेदारी माना जाता है।

जिन वाटरशेड परियोजनाओं में, खासकर राजीव गांधी वाटरशेड विकास परियोजनाओं में, उच्च अधिकारियों ने दिलचस्पी लेकर उनको कामयाब बनाने का प्रयास किया है, उनमें जल संग्रह और जल प्रबंधन में ही नहीं, वाटरशेड समितियों के गठन, सामुदायिक नियमन, निरीक्षण, रख–रखाव की व्यवस्था करने में अपूर्व सफलता मिली है। पीने के पानी, चारे, सिंचाई, वन संरक्षण, वृक्षारोपण की समस्याएं काफी हद तक हल हो गई हैं। ग्रामवासियों की आर्थिक खुशहाली भी बढ़ी है और बचतें भी। एक नया ज्वलंत और अनुकरणीय उदाहरण मध्य प्रदेश में सागर जिले का है जहां के गौरया गांव का काया पलट हो गया। उच्चाधिकारियों की प्रेरणा से परियोजना अधिकारी को गांव की 12 औरतों को प्रशिक्षण देकर उनकी समिति गठित करने में सफलता मिल गई। समिति को अधिकारियों और गांव वालों के सहयोग से अनेक चेक डैम और मीलों लंबी खाई बनवाने में कामयाबी मिली। सात लाख पौधें भी रोपे जा चुके हैं। तीन बचत समूह भी बने, जिनके 87 सदस्यों के बचत खाते भी खुल गए। अब समिति के सदस्यों को विश्वास है कि वे स्वतंत्र रूप से रख–रखाव और व्यवस्था का नियमन कर सकती हैं।

चार वर्ष पूर्व मध्य प्रदेश के प्रयोगधर्मी मुख्यमंत्री ने ऊपर से लेकर नीचे तक विभागीय सहयोग, कार्यान्वयन, निगरानी की अचूक व्यवस्था की और विभिन्न वाटरशेड और अन्य कार्यक्रमों के लिए आवंटित धन राशि की सहायता से आदिवासी बहुल जिले झाबुआ में वाटरशेड विकास अभियान चलाया। स्थानीय जन सहयोग सुनिश्चित करने के लिए हजारों समूह और समितियां गठित की गईं। इसी प्रकार आदिवासी बहुल जिले धार में भी काम हुआ; नतीजा मध्य प्रदेश के अन्य जिलों में जलभाव भले ही हो, झाबुआ में सभी बुनियादी आवश्यकताओं के लिए पानी की कमी नहीं है। इस जिले से काम की तलाश में बाहर जाने वाले लोगों की संख्या में भी उल्लेखनीय कमी आई है।

इसका निष्कर्ष यही है कि यदि राजनेता और अधिकारी लोगों को स्वावलंबी और खुशहाल बनाने का फैसला कर लें तो कम लागत और स्थानीय सामान तथा सहयोग से गांवों का नक्शा बदला जा सकता है। औसत से कम वर्षा होने की स्थिति दैवी आपदा का रूप नहीं ले पाएगी।

राष्ट्रीय और समग्र दृष्टिकोण से देखने और काम करने की सोची जाए तो पेयजल, सिंचाई, खेती, पशुपालन या स्वास्थ्य को अलग–अलग खानों में बांटकर नहीं देखा जा सकता। कृषि–प्रधान ग्रामीण जीवन में पर्यावरण, भौगोलिक संरचना और प्राकृतिक साधनों का अनन्य परस्पर संबंध है। खेती, उद्योग और बढ़ती आबादी की आवश्यकताओं में संगति बिठानी होगी। समग्र, समन्वित दृष्टि के बिना काम नहीं चलेगा। अंग्रेजों ने गांवों की घोर

इस प्रदेश में जहां मामूली वर्षा होती है वहां अतिशय पानी मांगने वाले गन्ने की खेती की जाती है। यह काम साधारण जनों के पेयजल स्रोतों पर डाका डालने के बराबर है। गर्मी अधिक पड़ने पर तमिलनाडु में भी पेयजल संकट अपने पंख पसार सकता है।

उपेक्षा की, ग्रामीण सामुदायिक जीवन को तहस–नहस कर दिया। अतिकेंद्रित शासन व्यवस्था उनके निजी हित साधन का सबसे बड़ा हथियार थी। संयोगवश 1947 के बाद औद्योगीकरण की ललक हावी हो गई, जिसमें गांव और जन सहयोग को अपेक्षित वरीयता नहीं मिल सकी। बड़े बांधों, विशाल परियोजनाओं को सर्वोच्च प्राथमिकता देने और प्रशासन द्वारा सब सुविधाएं खुद जुटाने का दम भरने के कारण गांवों में स्वावलंबन की भावना पैदा ही नहीं होने पाई।

हमें जल संसाधनों के संचय के परंपरागत साधनों और प्रणालियों को अपनाना होगा और आधुनिक प्रौद्योगिकी तथा वैज्ञानिक विधियों का सहारा भी लेना होगा। रेगिस्तान में बसे जैसलमेर और जोधपुर में झीलों, तालाबों, नहरों की बदौलत सूखे के वर्ष में भी पानी का अकाल नहीं पड़ता। दूसरी ओर सबसे अधिक वर्षा वाले स्थान चेरापूंजी (मेघालय) में पानी इफरात नहीं है। स्टेट हाउस में लिखा है : *किफायत से पानी बरता जाए।* पहले सभी प्रदेशों में जल संग्रह के अपने–अपने तरीके थे।

इन सूत्रों पर अमल किया जाए तो जल संकट से बचा जा ही नहीं जा सकता है, बल्कि चतुर्दिक संतुलित विकास के रास्ते खुल सकते हैं : तालाब, कुएं, बावड़ी, कुंड, कुड़ी या जिस क्षेत्र में जल संग्रह और सुरक्षा के जो भी परंपरागत साधन रहे हों उनको फिर अपनाया जाए। रख–रखाव और नए तालाबों, वाटरशेड

योजनाओं की देखभाल, मरम्मत आदि जिम्मेदारी स्थानीय समूहों–समितियों को सोंपी जाए। वन संरक्षण और वृक्षारोपण भी यथासंभव उनके जिम्मे हो। उनको अपनी मेहनत का लाभ उठाने का अवसर मिलेगा तो वे निश्चय ही जी–जान से ये काम करेंगे। सरकार उन्हें तकनीकी प्रशिक्षण और सहायता के अलावा वित्तीय सहायता भी दे।

जामनगर (गुजरात) के मध्य एक पुरानी बड़ी झील से शहर को एक–तिहाई जल मिलता था। उथली होते जाने के कारण वह इस वर्ष सूख गई। इन दिनों नगर निवासियों को दो–तीन दिन में केवल एक बार पानी मिलता है। अतः नागरिकों ने झील की सफाई और उसे गहरा करने के लिए धनराशि जमा की है जिससे कि भविष्य में वह सूखे नहीं।

मौजूदा वनों की रक्षा और वृक्षारोपण के लिए भी यही रास्ता अपनाया जाए। वन और वाटरशेड की हरियाली मिट्टी का कटाव ही नहीं रोकती, चारा और जलावन देने के अलावा पानी को जमीन में जज्ब होने का पूरा अवसर देती है। झील और तालाब भी भूजल के जलाशयों में पानी का स्तर गिरने नहीं देते।

हर क्षेत्र में पानी की उपलब्धता को ध्यान में रखकर फसलों के चयन और उद्योगों की स्थापना या उनके विस्तार की अनुमति दी जाए। नलकूपों द्वारा भूजल के अतिशय दोहन से कुछ वर्ष बाद जल संकट पैदा हो जाता है। सूखा बहुल और अल्पवृद्धि वाले क्षेत्रों में इस तरह का अनुशासन आवश्यक है अन्यथा चंचल मानसून की कृपणता जल संकट को जन्म देती रहेगी।

जिन वाटरशेड परियोजनाओं में, खासकर राजीव गांधी वाटरशेड विकास परियोजनाओं में, उच्च अधिकारियों ने दिलचस्पी लेकर उनको कामयाब बनाने का प्रयास किया है, उनमें जल संग्रह और जल प्रबंधन में ही नहीं, वाटरशेड समितियों के गठन, सामुदायिक नियमन, निरीक्षण, रख रखाव की व्यवस्था करने में अपूर्व सफलता मिली है। पीने के पानी, चारे, सिंचाई, वन संरक्षण, वृक्षारोपण की समस्याएं काफी हद तक हल हो गई हैं।

बड़े बांधों और बैराजों के बारे में भी पुनर्विचार किया जाना चाहिए क्योंकि अनेक छोटी नदियां गर्मियों में सूख जाती हैं। यमुना तो उद्योगों और शहरों का गंदा पानी बहाने का नाला बन गई है। नहरों के कारण जल भराव और खारेपन के कारण लाखों एकड़ जमीन खेती के लायक नहीं रह गई है।

भारतीय योजनाकारों को जल और भूमि प्रबंधन पर नए सिरे से विचार करके ऐसी नीतियां बनानी और अमल में लानी चाहिए जो बढ़ती आबादी और उद्योगों की सभी आवश्यकताओं में संतुलन बैठा सकें। अनेक स्तरों पर दूरंदेशी और अनुशासन की आवश्यकता है। भारत अकेला देश नहीं है जहां भूजल के अत्यधिक उपयोग से उत्पन्न असंतुलन खतरे की घंटिया बज रही हैं। वाशिंगटन स्थित वर्ल्डवाच इंस्टीट्यूट ने 'बियोंड मालथस' नामक अपने अध्ययन में बताया है कि भारत, पाकिस्तान, मिस्र, चीन, इंडोनेशिया और पश्चिमी अमरीका में आधी से अधिक खेती भूजल पर निर्भर है। जितना पानी रिस कर नीचे तक पहुंचता है उसका दूना पानी निकला जाता है। अतः भूजल का स्तर हर साल तेजी से घटता जा रहा है। कुछ दशक बाद खेती के उत्पादन में एक चौथाई कमी आ जाएगी।

जल के संचय और उपयोग के तौर तरीके बदल कर, खेती की आधुनिक तकनीक अपना कर इस भविष्यवाणी को झूठा साबित किया जा सकता है। विश्व बैंक ने भी भारतीय जल प्रबंधन के बारे में एक रिपोर्ट तैयार की है। उसमें भी कई उपयोगी सुझाव दिए गए हैं जिन्हें अपनाया जा सकता है। राज्य सरकारें जब तक कमर कर कस जल, भूमि, वन और रोजगार प्रबंधन की योजनाओं पर अमल नहीं करेंगी और स्थानीय जन–समूहों को जिम्मेदारी नहीं सौंपेंगी तब तक दिल्ली और राज्यों के सचिवालयों में बनी योजनाएं कारगर नहीं होंगी। ❑

भांवटा–कोल्याला को राष्ट्रपति सम्मान

व्यक्तियों और स्वयंसेवी संगठनों की प्रेरणा से जल संचय वाटरशेड विकास, वृक्षारोपण के द्वारा कुछ गांवों में हरियाली और खुशहाली अवतरित होने के उदाहरण दंत कथा का रूप ले चुके हैं। जैसे चंडीगढ़ के पास सुखोमजरी गांव, महाराष्ट्र में रालेगांव शिरडी, पंजाब में नाडा।

सबसे ताजा और उत्साहवर्धक उदाहरण है राजस्थान के अलवर जिले के भांवटा–कोल्याला गांव का जिसके प्रयासों से अरवारी नदी का सूखा पाट बारहमासी नदी में बदल गया है। इस तथा आसपास के गांवों के भगीरथी प्रयास को सरकारी मान्यता इस वर्ष तब मिली जब स्वयं राष्ट्रपति के.आर.नारायणन 28 मार्च को हमीरपुरा गए। उन्होंने भांवटा–कोल्याला के प्रयास की विशाल जनसभा में सराहना की : "भांवटा–कोल्याला के लोगों ने दिखा दिया है कि पर्यावरण को हानि पहुंचाए बिना विकास कार्य संभव है। राजस्थान के इस गांव के लोगों के महती प्रयास की तुलना राजा भगीरथ की उपलब्धि से की जा सकती है जो हिंदू पौराणिक कथा के अनुसार गंगा को पृथ्वी पर लाने में सफल हुए थे।..

"गांव वालों ने जो चैक डैम और जोहड़ बनाए हैं उनके चलते भूगत जल–स्त्रोत पुनः भर गए हैं और अतिरिक्त पानी बारहमासी अरवारी नदी के रूप में प्रवाहित हो रहा है... भांवटा–कोल्याला प्रयोग की सबसे उल्लेखनीय विशेषता यह है कि उन्होंने नदी के बहाव की दिशा में बसे गांवों की जरूरतों का भी ध्यान रखा जिसके कारण पानी के उपयोग के बारे में कोई विवाद नहीं उभरा।' यह भी याद रखने की बात है कि जल संचय के लिए आयोजित निर्माण–कार्य का 75 प्रतिशत खर्च स्वयं ग्रामवासियों ने उठाया है।

"मैं इस गांव के लोगों को बधाई देता हूं। उनकी पहल और आत्मनिर्भरता समूचे देश के लिए एक उदाहरण और प्रेरणा स्त्रोत है। लोगों ने न केवल नदी को पुनर्जीवित किया है वरन लोकतंत्री संगठन बनाए हैं जो समूची व्यवस्था को टिकाऊ बनाए रखेगा। ग्रामसभा और अरवारी ससद इसके ज्वलंत नमूने हैं।" ❑

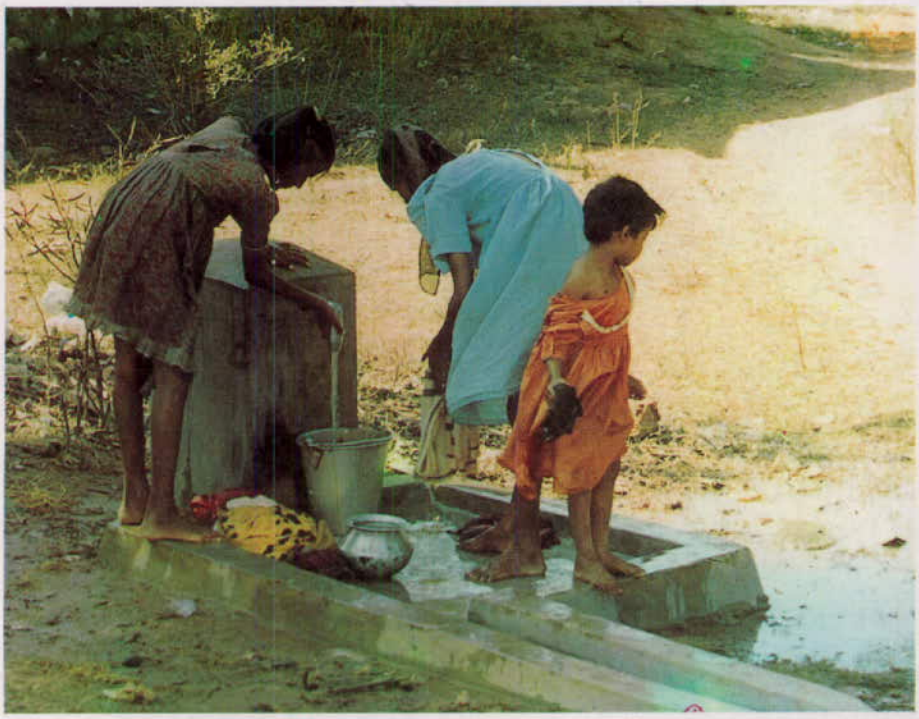

पेयजल : एक आधारभूत आवश्यकता

डा. जयंती लाल भंडारी

हमारे देश में समय–समय पर जल पर संकट पैदा हो जाता है और पानी की बूंद बूंद के लिए लोग तरसने लगते हैं। हालांकि सरकार 1954 से ही इस समस्या से जूझने में संलग्न है लेकिन अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। लेखक का कहना है कि समस्या से निपटने में लोगों को भी सक्रिय भूमिका निभानी होगी और जल संरक्षण के परम्परागत उपायों को बरकरार रखना होगा। नए तालाबों और कुओं के निर्माण के साथ वर्तमान कुओं, बावडियों और तालाबों के रख–रखाव पर ध्यान देना होगा। इसके साथ ही वनों का संरक्षण और काटे गए वनों की जगह नए वन लगा कर आम लोग समस्या से जूझने में काफी मदद कर सकते हैं।

भारत दुनिया के गिने–चुने जल संसाधन के अथाह भंडारों वाला देश माना जाता है। प्रकृति ने देश के कोने–कोने में नदियों का जाल बिछाया है। फिर भी देश में कुछ–कुछ वर्षों के अंतराल पर पेयजल एक संकट बन जाता है और लोग बूंद–बूंद पानी के लिए तरसते हैं। वर्ष 2000 में एक बार फिर भारत पेयजल संकट के दौर से गुजर रहा है। पेयजल संकट से यह स्पष्ट हो गया है कि सभी लोगों के लिए पीने का पानी उपलब्ध कराने की संतोषजनक व्यवस्था के लक्ष्य से हम अभी बहुत दूर हैं। मानव के साथ–साथ पशुओं के लिए पानी की कमी गंभीर रूप ले रही है। विश्व बैंक ने भी इस बात की पुष्टि की है कि सन् 2025 में विश्व की करीब दो तिहाई आबादी पानी के लिए तरसेगी। भारत ने पंचवर्षीय योजनाओं के शुरुआती दौर से समस्या से उबरने के लिए प्रयत्न करते हुए 1954 में राष्ट्रीय जल आपूर्ति प्रोग्राम की शुरुआत की।

जल संकट का समाधान करने हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी नवम्बर 1980 के दशक को अंतर्राष्ट्रीय जलापूर्ति और स्वच्छता दशक (1981–1991) के रूप में मनाते हुए सदस्य राष्ट्रों को इस क्षेत्र में विभिन्न योजनाओं को अपनाने हेतु तकनीकी और वित्तीय सहायता की पहल की। भारत सरकार ने भी इस समस्या की गम्भीरता को ध्यान में रखते हुए समय–समय पर विभिन्न योजनाओं के तहत मार्च 1991 तक सभी नागरिकों को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराने की योजनाएं बनाईं। प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस कार्य के लिए 49 करोड़ रुपये का आवंटन किया था जो छठी योजना में बढ़ाकर 4,178 करोड़ रुपये और आठवीं योजना में 16,711 करोड़ रुपये किया गया। समय–समय पर सरकार ने पेय जलापूर्ति को न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के रूप में विशेष दर्जा दिया। परन्तु बढ़ती जनसंख्या जो अब एक अरब के अंक को पार कर गई है और बुनियादी ढांचे के अभाव से समस्या गंभीर रूप ले रही है। एक अनुमान के अनुसार लगभग तीन लाख गांवों में पेय जल समस्या विद्यमान है।

भारत में पेयजल संकट निरन्तर अनुभव किये देश–व्यापी सूखे से और गहरता गया। समस्या का अवलोकन अगले पृष्ठ पर दी गई तालिका से किया जा सकता है :

संख्या	वर्ष	प्रभावित क्षेत्र	प्रभावित लोग
1.	1966	बिहार, उड़ीसा	5.0 करोड़
2.	1969	राजस्थान, गुजरात, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, हरियाणा, कर्नाटक तथा मध्य प्रदेश	1.5 करोड़
3.	1970	बिहार, राजस्थान	1.72 करोड़
4.	1972	राजस्थान, हिमाचल तथा उत्तर प्रदेश	5.0 करोड़
5.	1979	पूर्वी राजस्थान, हिमाचल, पंजाब तथा उत्तर प्रदेश	20.0 करोड़
6.	1982	राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, पंजाब	10.0 करोड़
7.	1983	तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, केरल, राजस्थान, कर्नाटक, बिहार तथा उड़ीसा	10.0 करोड़
8.	1987	सम्पूर्ण उत्तर पश्चिम तथा पूर्वोतर भारत	30.0 करोड़
9.	1992	राजस्थान, उड़ीसा, गुजरात, बिहार तथा मध्य प्रदेश	उपलब्ध नहीं
10.	2000	राजस्थान, गुजरात, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश तथा मध्य प्रदेश	10.0 करोड़

उपर्युक्त आकड़ों से समस्या की गम्भीरता का अनुमान लगाया जा सकता है कि विभिन्न वर्षों में भारत में सूखे का सिलसिला जारी रहने से करीब 77 प्रतिशत कस्बों व शहरों तथा 31 प्रतिशत ग्रामीण जनसमूह को पेयजल की सुविधा उपलब्ध हो पाई।

विशाल भारत के लिए कठिन लक्ष्य

जहां भारत की जनसंख्या एक अरब के अंक को पार कर चुकी है सम्भवतः एक प्रश्न उभर कर आता है कि प्रति वर्ष प्राकृतिक आपदा और बढ़ते शहरीकरण से क्या सरकार अपने प्रयासों में सफल हो सकेगी? एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2025 में प्रति व्यक्ति वार्षिक जल की उपलब्धता घटकर 1350 क्यूबिक मीटर रह जाएगी। बढ़ती जनसंख्या के कारण ऐसा होगा।

जल संकट पर काबू पाने के लिए भारत को अपने परम्परागत सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए जल संकलन क्षमता को बनाए रखना होगा। प्रतिवर्ष वर्षा से भारत को 4,000 अरब क्यूबिक मीटर जल प्राप्त होता है, जिसका अधिकाधिक उपयोग करने के तरीकों को अमल में लाना होगा, तभी निरन्तर बढ़ती आबादी व पेय जल संकट के अंतराल को कम किया जा सकेगा। समेकित जल प्रबंधन और राष्ट्रीय जल नीति को व्यावहारिक रूप में अमल में लाकर ही बढ़ती आबादी के लिए उपयुक्त जल प्रबंधन किया जा सकता है।

इस संकट से निबटने के लिए सरकार की भूमिका योजना के शुरुआती दौर से ही सक्रिय रही है। वर्ष 1954 में राष्ट्रीय जल पूर्ति कार्यक्रम को अपनाते हुए हर योजना में वित्तीय प्रावधान रखा गया जिसका 65 प्रतिशत वित्तीय आवंटन शहरों तक ही सीमित रहा। इस कार्यक्रम में खर्च की राशि भी लगातार बढ़ाई गई। आठवीं योजना के दौरान इस कार्यक्रम हेतु 16,711 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया। सरकार द्वारा वर्तमान वर्षों में निम्न प्रकार योजनाबद्ध लक्ष्य रखा गया :

वर्तमान में चल रही नवीं पंचवर्षीय योजना के तहत सरकार ने सुरक्षित पीने के पानी, प्राथमिक स्वास्थ्य और शिक्षा सुविधाओं को योजना का विशेष उद्देश्य रखते हुए इस आधारभूत आवश्यकता की कमी को पूरा करने के कार्यक्रम बनाए हैं। सरकार के कार्यक्रमों के अतिरिक्त देश के नागरिकों को जल संरक्षण के परम्परागत सिद्धान्तों पर भी अमल करना होगा। ये सिद्धान्त मुख्यतः वर्तमान कुओं और तालाबों का रख– रखाव, भौगोलिक स्थिति के अनुसार नए कुओं और तालाबों का निर्माण, पेड़–पोधों तथा हरियाली को बढ़ावा देना, वनों का संरक्षण तथा भौगोलिक स्थिति के अनुसार भू–जल दोहन आदि पारम्परिक तरीकों को विशेषकर ग्रामवासी समझें तथा सरकार ऐसे कार्यक्रम बनाए जिससे उपलब्ध जल, जमीन और जंगल का आदर्श विदोहन सम्भव हो सके। अब हमें बड़ी–बड़ी सिंचाई योजनाओं की जगह छोटी–छोटी सिंचाई योजनाओं को अपनाना होगा।

सरकार की विकास नीति के मार्ग पर प्रतिवर्ष प्राकृतिक आपदाएं और बढ़ती आबादी रुकावटें पैदा कर रही है। राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली को प्रतिदिन 800 करोड़ गैलन पानी की आवश्यकता है। नदियों व भूमिगत स्रोत से 600 करोड़ गैलन पानी ही नगरवासियों को उपलब्ध है। बढ़ती हुई जनसंख्या तथा प्राकृतिक स्रोतों के अत्यधिक दूषित हो जाने से यह समस्या देश के हर शहर और ग्रामीण क्षेत्र में बहुतायत में विद्यमान है। आज 'जल की हर बूंद कीमती है', जैसे नारों को व्यावहारिक रूप देना होगा। जल के प्रदूषण अनियंत्रित और अनुचित उपयोग को रोकना होगा। औद्योगिक, कृषि तथा घरेलू सभी स्रोतों पर जल के नियंत्रण व संरक्षण को सुनिश्चत करना होगा।

समाज के विभिन्न विकास क्षेत्रों क्रमशः स्वास्थ्य, शिक्षा व स्वच्छता में महिला वर्ग की भागीदारी और बढ़ जाती है, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को पीने के पानी और अन्य आवश्यक सुविधाओं को जुटाने की जिम्मेदारी उठानी पड़ती है। देश में विद्यमान महिला संगठनों को इस कार्य में जन–जागृति लानी होगी तथा ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी में पम्प सेट लगाने की जगह का चुनाव, उपयोग की जाने वाली तकनीकों की जानकारी आदि में 'फ्रन्टलाईन वर्कर' के रूप में ग्रामीण महिला वर्ग सरकार के नियमित कार्यक्रमों में अपना सहयोग दें तथा दूषित जल से होने वाली बीमारियों से परिवार व समाज को मुक्त रखें। ❑

वर्ष	योजना तहत गांव लेने का लक्ष्य	उपलब्धि	प्रतिशत
1996–97	96,307	95,056	99
1997–98	99,613	1,17,840	118
1998–99	1,04,902	1,28,187	107

जल संकट : एक गम्भीर चुनौती

डा. रवि शंकर जमुआर*

हमारे देश में पेय जल की समस्या गम्भीर है और गांवों में स्वच्छ पेयजल की समस्या तो विकट रूप ले चुकी है। इसके साथ ही नदियों का जल औद्योगिक कचरे द्वारा प्रदूषित हो रहा है। समस्या से निपटने के लिए कोई स्पष्ट नीति नहीं है। यह चर्चा करते हुए इस लेख में बताया गया है कि लोगों में जल के उपयोग के प्रति जागरूकता के अभाव के कारण समस्या और बिगड़ रही है।

"क्षिति, जल, पावक, गगन समीरा।
पंच तत्व यह अधम शरीरा।।

अर्थात् जल और अन्य चार तत्वों के अभाव में शरीर के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती। यूं तो जल समस्त जीव–जगत के लिए अनिवार्य है, लेकिन इसका उपयोग मुख्य रूप से पीने के साथ–साथ जीवन को सुखी और आरामदेह बनाने में किया जाता है। इसके अतिरिक्त जल का उपयोग खेती–बाड़ी और कल–कारखाने जैसे अन्य कार्यों में भी किया जाता है। इसीलिए मानव–जीवन के क्रिया–कलापों में जल का अत्यधिक महत्व है और इसे जीवन का आधार कहा जाता है।

सीमित मात्रा

जल एक प्रकृति–प्रदत्त सम्पदा है जिसकी मात्रा सीमित है। यह सच है कि विश्व में तीन–चौथाई जल और एक–चौथाई थल है लेकिन इसके बावजूद विश्व के क्षेत्रफल के केवल 0.3 प्रतिशत भाग में ही शुद्ध, स्वच्छ और पीने योग्य, जल उपलब्ध है।

जल–संकट

जल की सीमित उपलब्धता ने आज मानव–समुदाय के समक्ष जल–संकट की समस्या उत्पन्न कर दी है। आर्थिक विकास की शीघ्रताशीघ्र प्राप्ति की दौड़ ने जल के अधिकाधिक उपभोग को प्रोत्साहित किया है जिससे यह संकट और गहराता जा रहा है। शहरों में जहां साफ और शुद्ध जल की निरन्तर कमी हो रही है, वहीं गांवों में स्वच्छ पेय जल की समस्या विकट होती जा रही है। ऐसा अनुमान है कि एक ग्रामीण परिवार की तुलना में एक शहरी परिवार को छः गुणा अधिक जल की आवश्यकता पड़ती है। आज भी विश्व में लगभग डेढ़ अरब लोग ऐसे हैं जिनके लिए शुद्ध पेय जल की प्राप्ति एक सपना बन गई है।

भारत की स्थिति

कहना न होगा कि जल सम्पदा की उपलब्धता की दृष्टि से भारत की गणना विश्व के कुछ सम्पन्नतम देशों में की गई है, लेकिन हमारे यहां जल का संकट निरन्तर गंम्भीर हो रहा है। यूं तो हमारे देश में जल सम्पदा के बारे में कोई

* व्याख्याता, स्नातकोत्तर अर्थशास्त्र विभाग, के. एल.एस. कालेज, नवादा।

प्रामाणिक आंकड़े और तथ्य उपलब्ध नहीं हैं, फिर भी केन्द्रीय भू–जल बोर्ड ने यह अनुमान लगाया है कि उपयोग–योग्य सतही जल की क्षमता 6.9 करोड़ हेक्टेयर मीटर है जबकि उपयोग के योग्य भूमिगत जल की क्षमता 4.5 करोड़ हेक्टेयर मीटर है। इस तरह देश में कुल 11.4 करोड़ हेक्टेयर मीटर जल उपयोग के योग्य उपलब्ध है। ऐसा अनुमान व्यक्त किया गया है कि वर्तमान समय में उपयोग के योग्य सतही जल का लगभग 50 प्रतिशत और भूमिगत जल का लगभग 30 प्रतिशत हिस्सा ही उपयोग किया जा रहा है। इन आंकड़ों से प्रतीत होता है कि अभी भी काफी मात्रा में जल उपयोग नहीं किया जा रहा है।

लेकिन जल सम्बन्धी इन आंकड़ों के प्रति सन्देह व्यक्त किया गया है। सुप्रसिद्ध जल अर्थशास्त्री श्री ए. बैद्यनाथन का कहना है कि "ये अनुमान कुछ ज्यादा ही आशावादी लगते हैं, टिकाऊ सतही बहाव का आकलन विस्तृत खोजबीन पर आधारित नहीं है। ज्यादा–से–ज्यादा यह एक अटकलबाजी है, उपयोग में नहीं लाए जा रहे भूमिगत पानी के अनुमान की भी भूमिगत सारणी में व्यापक और निरन्तर गिरावट के साथ संगति बिठानी होगी।" उनके विचार में जल संतुलन के आंकड़ों को एकत्र करने का सर्वोत्तम आधार नदी का थाल है क्योंकि नदी का थाल ही एक ऐसी पारिस्थितिकीय इकाई है जिसका उपयोग मानव समुदाय द्वारा किया जाता है। श्री वैद्यनाथन के विचार में "हम वर्षा के फल का एक छोटे से भाग का ही उपयोग कर रहे हैं, लेकिन जब हम कुछ नदी थालों से उपयोग में लाए जा रहे सतही और भूमिगत पानी की मात्रा पर ध्यान देते हैं तो पाते हैं कि यह पहले से ही बहुत ज्यादा है। कुछ नदियों में तो आवश्यक न्यूनतम बहाव तक नहीं है।"

उक्त तथ्यों से एक बात स्पष्ट है कि देश में स्वच्छ जल की उपलब्धता सीमित नहीं तो कम–से–कम असीमित भी नहीं है। कर्नाटक और तमिलनाडु राज्यों के बीच 'कावेरी जल विवाद', पंजाब, हरियाणा और दिल्ली के बीच पानी के लिए गहराता विवाद देश में जल–संकट के ज्वलन्त उदाहरण हैं। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि वर्तमान जल की मांग, पूर्ति और उपलब्धता से जुड़े तथ्यों को जांचा और परखा जाए और उन कारणों पर ध्यान आकृष्ट किया जाए जो जल की कमी के लिए उत्तरदायी हैं, वरना आने वाले समय में जल संकट एक गम्भीर चुनौती बन जाएगी।

कारण

बढ़ती जनसंख्या, तीव्र औद्योगिक विकास और खेती के नए इलाकों हेतु सिंचाई की समुचित व्यवस्था आदि कुछ ऐसे महत्वपूर्ण कारक हैं जिससे देश में जल की मांग दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ रही है। इसके अतिरिक्त जल–चक्र के टूटने, जंगलों की अंधाधुंध कटाई, भूमिगत जल के स्तर में गिरावट और नदियों के तल में गाद जमा होने से भी जल की उपलब्धता में कमी हो रही है। सच्चाई तो यह है कि भूमि, जल और जंगल ऐसे प्राकृतिक साधन हैं जो एक–दूसरे के पूरक हैं। किन्तु हम भूमि का उपयोग करते समय जल और वन संसाधनों के आपसी सामजस्य की अनदेखी कर बैठे हैं जिसके फलस्वरूप जल की उपलब्धता लगातार घटती जा रही है और हम

सदस्यता कूपन

मैं/हम कुरुक्षेत्र का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 70 रुपये का
दो वर्ष के लिए 135 रुपये का
तीन वर्ष के लिए 190 रुपये का

(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....

पता .....

.....

पिन .....

इस कूपन को काटिए और इस पृष्ठ की पिछली ओर बने बाक्स के नं. 3 में दिए गए पते पर भेजिए।

गम्भीर जल–संकट की और बढ़ते जा रहे हैं।

दूसरी ओर द्रुतगति से बढ़ता जल–प्रदूषण भी स्वच्छ जल की उपलब्ध मात्रा को कम कर इस समस्या को जटिल बना रहा है। केन्द्रीय जल प्रदूषण निवारण और नियंत्रण बोर्ड का अनुमान है कि देश में 142 प्रथम श्रेणी के शहरों से प्रतिदिन 80 लाख लीटर से भी अधिक सीवरेज निकलता है जो किसी न किसी तरह से नदियों में पहुंचकर उसे प्रदूषित करता है। गांवों में भी जल–प्रदूषण की समस्या है जिसका मुख्य कारण मल प्रवाह, सफाई और चिकित्सा व्यवस्था का अभाव है। गांव के अधिकांश लोग खुले कुओं, पोखरों, तालाबों, झीलों या फिर नदी का जल पीते हैं जो प्रायः दूषित होता है। इस प्रकार शहरों की गन्दगी, उद्योगों का कचरा और कीटनाशक दवाओं तथा कूड़े आदि की मात्रा में दिन–प्रति–दिन वृद्धि हो रही है जिससे देश की लगभग सभी नदियां प्रदूषित हो रही हैं और उनमें जल की मात्रा घटती जा रही है। नदियों का जल इतना प्रदूषित होता जा रहा है कि अब उनमें रहने वाले जलीय जीवों का जीवन प्रभावित होने लगा है।

समाधान

निःसंदेह हमारे देश में अनियंत्रित प्रदूषण, भूमिगत जल का अनियंत्रित दोहन, सिंचाई व्यवस्था की अनदेखी कर शहरों और उद्योगों हेतु जल–भंडारों से अत्यधिक जल की निकासी और धारा से नीचे पड़ने वाले गांवों के लोगों के लिए स्वच्छ पेय–जल की निरन्तर कमी आदि ऐसे महत्वपूर्ण कारण हैं जिन पर कारगर नियंत्रण रखने की आवश्यकता है। इस दृष्टि से सर्वप्रथम प्रदूषण फैलाने वाली गतिविधियों पर प्रतिबन्ध लगाया जाना चाहिए। दूसरा यह है कि भूगिगत पानी को खींचने पर सरकार का नियंत्रण होना चाहिए ताकि जल के बेतहाशा विदोहन को नियंत्रित किया जा सके। किसानों, उद्योगपतियों और शहरी परिवारों के जल की मांग से सम्बन्धित न तो कोई व्यवस्था है और न ही जल के मूल्य पर कोई नीति का निर्धारण हुआ है। जल–सम्पदा लोगों को मुफ्त में या फिर कौड़ियों के मूल्य पर सुलभ है। फलतः हर कोई इस प्राकृतिक सम्पदा को लूटने में लगा है और उन्हें देश के जल–संकट की कोई चिंता नहीं है। अतएव तीसरा महत्वपूर्ण कदम यह होना चाहिए कि जल सम्पदा का उचित मूल्य निर्धारित किया जाए। चौथा सुझाव यह है कि लोगों में जल–संकट के प्रति जागरूकता उत्पन्न की जाए। जल का ज्यादा उपयोग मानव–समाज द्वारा किया जाता है। इसलिए अगर लोगों, विशेषकर महिलाओं में, जल के नियंत्रित उपभोग के प्रति चेतना उत्पन्न हो जाए तो काफी हद तक इस समस्या पर नियंत्रण पाया जा सकता है। अतः नागरिक चेतना पैदा किया जाना नितान्त आवश्यक है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि देश में शुद्ध और स्वच्छ जल की कमी और इससे भविष्य में होने वाले जल–संकट से यदि हमें उबरना है तो लोगों को जल–साक्षरता के प्रति सजग होना होगा और वास्तव में यही समय की मांग भी है। ❑

1. हम दिल्ली से *योजना* **अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू, पंजाबी और उड़िया में**
   कुरुक्षेत्र **हिन्दी और अंग्रेजी में**
   आजकल **हिन्दी और उर्दू में**
   और बच्चों की पत्रिका *बाल भारती* **हिन्दी में** प्रकाशित करते हैं।
2. डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर निदेशक प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय होना चाहिए।
3. यह कूपन विज्ञापन और प्रसार संख्या प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक 4, लेवल–7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110066 के पते पर भेजिए।
4. सदस्य बनने के लिए आप हमारे निम्नलिखित केन्द्रों पर भी सम्पर्क कर सकते हैं :

   प्रकाशन विभाग : पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली–110001; सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली–110001; कामर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई–400038; 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता–700069; राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई–600090; बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना–800004; निकट गवर्नमेंट प्रेस, प्रेस रोड, तिरुअनंतपुरम–695001; 27/6, राम मोहन राय मार्ग, लखनऊ–226019; राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद–500004; प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरा मंडल, बंगलौर–560034; सम्पादक, पेयोभरा, नौझम रोड, उजान बाजार, गुवाहाटी–1; सम्पादक, योजना (गुजराती), राम निवास, पालदी बस स्टाप के पास सरखेज रोड, अहमदाबाद

   पत्र सूचना कार्यालय : सी.जी.ओ. काम्पलैक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर (म.प्र.); 80, मालवीय नगर, भोपाल–462003; के–21, नंद निकेतन, मालवीय मार्ग, 'सी' स्कीम, जयपुर–302003
5. शुल्क प्राप्त होने के बाद नियमित रूप से पत्रिका के अंक मिलने शुरू होने में आठ से दस सप्ताह का समय लगता है।

कहानी

कमला

विनोद कुमार लाल

कमला को उसकी मालकिन ने एक बार फिर आवाज दी। घर के बरामदे के कोने में बैठी कमला खुली आंखों से न जाने किन सपनों में खो गई लग रही थी। आज एक वर्ष से अधिक हो आया था कमला को गांव से शहर आए। उसकी इस आदत से मालकिन अक्सर नाराज होकर उसकी पिटाई भी कर देती थी।

"क्या सोच रही हो कमला!" अचानक रघुनाथ बाबू की प्यार भरी आवाज सुनकर वह चौंक गई।

"कुछ नहीं!" कुछ भी तो नहीं बाबूजी!" कमला फीकी हंसी हंसते हुए बोली।

"नहीं, कुछ तो जरूर ही तुम सोच रही थीं।" रघुनाथ बाबू ने पुनः प्यार से पूछा।

"कमला! अरी कमला–" तभी रघुनाथ बाबू की पत्नी बड़बड़ाती हुई कमला के पास पहुंची और उसे घसीटकर घर के अंदर ले गई। इससे आगे किशोरी कमला के जीवन में हस्तक्षेप की हिम्मत रघुनाथ बाबू में नहीं थी।

कमला को कोई साल भर पहले उसका बापू मुनेसर डेढ़ सौ रुपये माहवार की पगार पर इस घर का काम–काज निपटाने के लिए छोड़ गया था। सौ रुपये रघुनाथ बाबू देते थे और पचास रुपये उनके पोते को खिलाने के एवज में रघुनाथ बाबू का लड़का मनोहर देता था।

बारह–वर्षीय कोमल हृदया किशोरी इतने बड़े घर के न खत्म होने वाले दैनिक काम–काज की भीड़ में भी न जाने किन–किन सपनों को संजोया करती थी।

कल रात को रघुनाथ बाबू की पोती प्रियंका से वह बातें कर रही थी, "दीदी,, तुम अपने स्कूल में पढ़ाई में अब्बल आई हो न।"

"हां! तुम्हें सुनकर अच्छा लगा क्या?"

हां! बहुत अच्छा लगा। काश ....."

"क्यों! तुम उदास क्यों हो गईं कमला!" प्रियंका ने अचानक उदास हो आई कमला के चेहरे को देखकर पूछा।

कमला खामोश ही रही। उसकी पलकों से आंसू की दो मोटी बूंदें भी लुढ़क आई थीं।

प्रियंका ने अपने पापा मनोहर को और फिर दादा रघुनाथ बाबू को ये बातें बताईं। रघुनाथ बाबू ने कमला को प्यार से अपने पास बुलाकर बिठाया और पूछा, "तुम भी प्रियंका की तरह पढ़कर अपने मन की इच्छा पूरी करना चाहती हो न।"

कमला चुप ही रही।

"मगर कमला!" रघुनाथ बाबू आगे बोले "मैं जानता हूं कि मैं तुम्हें वापस भी भेज दूं तो तुम्हारा बापू पांच रुपये प्रतिदिन की पगार पर तुम्हें घने जंगलों में दिनभर बीड़ी के पत्तों को चुनने के लिए भेज देगा। उसे तुम्हारे भविष्य की नहीं, उन पांच रुपयों की परवाह है जो तुम प्रतिदिन शाम को उसके हाथों में थमाओगी। इसलिए....."

रघुनाथ बाबू आगे कुछ कहते कि अंदर से बड़बड़ाती हुई उनकी पत्नी वहां आ पहुंची।

"ओहो, तो तुमने बिठा रखा है इसको यहां। अरी कमला! तुझे कुछ याद भी रहता है कि दिनभर में जो काम नहीं निपट पाता, उसे शाम को पूरा करना है।" ओसारे पर रखे कपड़ों की धुलाई, खाली बर्तनों की सजावट, पीने का पानी, रसोई की नालियों की सफाई और न जाने क्या–क्या कामों की लिस्ट थी रघुनाथ बाबू की पत्नी के मुंह पर जो खत्म होने का नाम ही नहीं लेती थी। कमला जब कामों में व्यस्त हो जाती तो रघुनाथ बाबू की पत्नी उनकी खबर लेने लगतीं।

"तुम चाहते क्या हो? इसे इसके बाप के पास वापस भेज देना।" फुरसत के वक्त रघुनाथ बाबू की पत्नी झुंझलाकर उनसे पूछती, "ठीक भेज दो इसे, मगर याद रखना। दफ्तर के समय पर खाना तैयार नहीं हुआ तो मुझे कुछ मत कहना। तुम्हारे कपड़ों की सफाई की जिम्मेवारी अब उखड़ी सांसों की हालत में मैं नहीं ले सकती। तुम्हारे पूजा–पाठ का इंतजाम, बिस्तर आदि ठीक करना। सब कमला के भरोसे हैं। आगे जो तुम्हें ठीक लगे करो, मैं कुछ नहीं कहूंगी।" रघुनाथ बाबू की पत्नी एक ही सांस में सारी बातें कह जाती थीं।

"मगर मनोहर की मां यह भी तो सोचो कि इस बच्ची का भी अपना कोई भविष्य है," मनोहर बाबू तर्क देते, "इसके कुछ अरमान हैं, कुछ सपने हैं जिन्हें यह अकेले में गुपचुप संजोया करती है। मैं केवल यह चाहता था कि इसकी भी पढ़ाई शुरू करा दी जाए और घर के काम–काज से कुछ समय...." रघुनाथ बाबू की बात अधूरी ही रहती कि उनकी पत्नी भड़क उठती थी।

"तो इसके बाप ने इसे यहां पढ़ाई कराने को रख छोड़ा है क्या? पिछले महीने ही तो आया था यहां वह। इसकी पगार पचास रुपये बढ़ाने की धमकी दे गया है। ठीक है। तुम इसका किसी स्कूल में दाखिला करा दो। मनोहर की बहू अपने बच्चे को खुद ही सम्भालेगी। और किसी तरह मैं अपना काम निपटा लूंगी। तुम अपनी सोच लेना।" रघुनाथ बाबू की पत्नी धमकी देकर कमरे से बाहर निकल गई।

इससे आगे रघुनाथ बाबू की समझ भी काम नहीं कर पाती थी। वे खामोश होकर इस मुद्दे से अपना ध्यान हटाने की कोशिश करने लगते थे। मगर कहीं कुछ ऐसा था कि किशोरी कमला का भोला चेहरा नजरों के सामने पड़ते ही वे पुनः कमला के भविष्य की गुत्थियां सुलझाने की कोशिश करने लगते थे।

समय पंख लगाकर उड़ता गया। रघुनाथ बाबू के लड़के मनोहर का तबादला जमशेदपुर में हो गया। उसने कमला को अपने साथ ले जाने की इच्छा जताई। रघुनाथ बाबू की पत्नी तो फिर भी हां कर देती मगर रघुनाथ बाबू अड़ गए। कमला इस घर में कम से कम रघुनाथ बाबू की सहानुभूति की पात्र थी। उनके बेटे मनोहर के हृदय में कमला की इच्छाओं, उसके अरमानों के प्रति कोई नरम दृष्टिकोण नहीं था, यह बात रघुनाथ बाबू भली–भांति समझते थे।

मनोहर के प्रस्ताव का विरोध रघुनाथ बाबू को महंगा पड़ा। मनोहर ने एक तरह से उनसे सारे नाते ही तोड़ लिए। कमला को लेकर अपनी पत्नी से उनकी खिच–खिच पहले की तरह चलती रही। इस बीच कमला का बाप भी आता रहा। उसे सिर्फ नकद रुपयों से मतलब था, कमला के भविष्य से नहीं।

अचानक एक दिन रघुनाथ बाबू कमला को घर से उठाकर एक आवासीय विद्यालय में ले गए। उन्होंने वहां उसका दाखिला करा दिया। कमला को छोड़कर जब वे घर वापस लौटे तो घर में मानो भूचाल आ गया। उनकी पत्नी की गरज से घर कंपित हो उठा। ठीक है, अब मैं समझ गई। तुम कमला के लिए मेरी जान की भी परवाह नहीं कर सकते हो। इसलिए मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं अब मनोहर के साथ ही रहूंगी। वैसे भी बुढ़ापे में बेटा ही सहारा होता है, यह बात देर से ही पर मेरी समझ में आ ही गई। मैं तो अब चली, तुम अपनी सोच लेना।" रघुनाथ बाबू की पत्नी उस दिन दिनभर अकेले में सिसकियां लेती रही।

कमला के भविष्य के लिए रघुनाथ बाबू ने उसे छोड़ा, मगर इस विवाद में उन्हें उनकी पत्नी ही छोड़ गई।

समय की किताब के कुछ और पन्ने भरते गए। रघुनाथ बाबू का क्या हुआ कमला कहां हैं, इसकी खोज खबर मां–बेटे में से किसी ने भी नहीं ली। अचानक ही एक दिन कहीं से यह खबर आई कि रघुनाथ बाबू गुजर गए। बेटे ने अपना फर्ज निभाते हुए उनकी अन्त्येष्टि आदि सम्पन्न करा दी। मनोहर ने पिता के सरकारी बकाये की प्राप्ति हेतु जब लिखा–पढ़ी शुरु की तो यह जानकर उसे बहुत हैरानी हुई कि अपने जीवन में ही उन्होंने अपनी भविष्य–निधि के सारे पैसे निकाल लिये थे। उन रुपयों का उन्होंने क्या किया, यह किसी को पता नहीं चल सका।

कई वर्ष और गुजर गए। मनोहर की बेटी प्रियंका डाक्टर बन गई। इधर बीमार मनोहर की मां की हालत बिगड़ती चली गई। मनोहर ने उन्हें शहर के एक अच्छे हस्पताल में भर्ती करा दिया। लगातार तेरह दिनों की बेहोशी के बाद जब मनोहर की मां ने अपनी आंखें खोलीं तो सामने खड़ी लेडी डाक्टर की जोड़ी देखकर वह हैरान रह गई। उनमें से एक थी उनकी पोती प्रियंका और दूसरी थी कमला। वही कमला जिस पर वह अपना हुक्म चलाया

करती थी। वही कमला जिसको लेकर उन्होंने अपने पति तक को छोड़ दिया था। पास खड़ी कमला के होठों पर बस एक मधुर मुस्कुराहट थी और आंखों में अपनी पुरानी मालकिन के लिए सम्मान की भावना।

मनोहर की मां ने उसे इशारे से पास बुलाया और कांपते स्वर में पूछा "कमला, तुम यहां कैसे!"

"मां जी, अब आप खतरे से बाहर हैं। मैं इस हास्पिटल की डाक्टर हूं जो आपका इलाज कर रही हूं। और ये रही आपकी पोती प्रियंका जो मेरे हास्पिटल की डाक्टर होने के साथ–साथ मेरी सबसे अच्छी दोस्त भी है।" कमला ने बताया।

"मगर कमला तुम डाक्टर किस तरह बनीं! तुम्हारी पढ़ाई का खर्चा किसने उठाया! सचमुच तुम्हें एक डाक्टर के रूप में देखकर मुझे बहुत खुशी हो रही है! कमला, हो सके तो अपनी इस बूढ़ी मां को माफ कर देना।" मनोहर की मां का स्वर यह कहते हुए भारी हो उठा।

"ये आप क्या कह रही हैं मांजी!" कमला ने मांजी के मुंह पर अपना हाथ रखते हुए कहा, "माफी तो मुझे आपसे मांगनी है। मेरे कारण बाबूजी और आपके बीच दूरियां बढ़ीं और अलगाव भी हो गया। मगर मांजी, बाबूजी मेरे लिए भगवान थे। उन्होंने अपनी जिन्दगी की सारी गाढ़ी कमाई अपनी भविष्य निधि के पैसों से मेरी मेडिकल की पढ़ाई का खर्चा उठाया। प्रियंका सब कुछ जानती है। सचमुच, बाबूजी महान थे मांजी।" अपनी बात पूरी करते–करते कमला भाव–विभोर हो उठी थी।

"बेटी कमला और बेटी प्रियंका! तुम दोनों मेरे करीब आओ।" मांजी ने उन दोनों को अपने पास बुलाया और फिर उनकी हथेलियों को अपनी झुर्रियों भरे गालों तक ले गईं जहां उनकी आंखों से ढुलक आईं आंसुओं की बूंदें उनकी हथेलियों को तर कर रही थीं।

"बेटी कमला! आज से तुम मुझे मांजी नहीं, सिर्फ मां कहकर पुकारोगी। वैसे तो मैं तुम्हारी मां कहलाने के काबिल नहीं मगर मनोहर के बापू ..."

"मां, मां! छोड़ो भी अब पुरानी बातें। आज से सिर्फ तुम मेरी मां हो और मैं तुम्हारी बेटी।" कमला ने अपनी मां के सीने पर अपना सर टिका लिया था।

"और बेटी प्रियंका! तुम मुझसे एक वादा करो।" मांजी ने प्रियंका का हाथ पकड़कर कहा।

"बोलो न दादी मां! मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकती हूं।"

"बेटी प्रियंका! तुम सिर्फ कमला की बहन ही नहीं, उसकी सबसे अच्छी सहेली हो। इसलिए जीवनभर यह ख्याल रखना कि कोई कमला अपनी राह भटक न पाए। किसी कमला को वह जिन्दगी नसीब न हो जिसमें उसके भविष्य के सपने, उसके अरमान पनप न सकें। इसलिए बेटी प्रियंका, तुम हर कमला की जिन्दगी में उसके सपनों के फूल खिलने देना।" पता नहीं मां जी भावावेश में क्या–क्या कहे जा रही थीं और कमला और प्रियंका मुस्कुराती हुई उनकी भावनाओं को समझ रही थीं।

"मां जी!" तभी प्रियंका एक नन्हीं बच्ची का हाथ मां जी के हाथों में थमाते हुए बोली, यह है विमला जो गांव से आई है। इसके बाप को पैसे की जरूरत है और विमला को तलाश है अपने भविष्य की। इसलिए मां जी, कमला बहन और मैने मिलकर इस विमला को उसका भविष्य उसे देने का निश्चय किया है। मां जी, आप हमें अपना आशीर्वाद दीजिए।"

"मेरा आशीर्वाद जन्म–जन्मांतर तक तुम लोगों के साथ है बेटी! तुम हजारों कमला–विमला का भविष्य तैयार करो, यही मेरी शुभ कामना है।"

हस्पताल की खुली खिड़की से डूबते सूरज की चमकीली रोशनी कमला और प्रियंका के चेहरे पर सीधी पड़ रही थी जो उनके दृढ़ निश्चय पर अपनी मुहर लगा रही थी। ❑

ताजी हवा

हरि विश्नोई

लोग चर्चा कर रहे हैं
आज मेरे गांव की,
तपती गर्मी में मिसालें
दी हैं उसने छांव की।

बरसों बीते गांव में –
झगड़ा नहीं कोई हुआ,
सोचने के ढंग को यूं
प्रेम पारस ने छुआ।

था अंधेरा घना बेहद
बस लड़े बन कर दीये,
रात भर जल–जल के खुद
अब रास्ते रोशन किए।

स्कूल, अस्पताल, बिजली
फोन, टी.वी., सब यहां,
कुआं, पीपल, बैल, हल
सबसे भली ताजी हवा।

गांव की सुखिया बनी
सरपंच कैसे निर्विरोध,
शहर के विद्यार्थी कुछ
कर रहे हैं इस पे शोध।

गांव की कच्ची सड़क को
सबने मिल पक्का किया,
नशा खोरी रूढ़ियों को
छोड़कर धक्का दिया।

अब हमारे गांव को
देखने आते हैं लोग,
खुद तरक्की कैसे की है
जानना चाहते है लोग।

भारत में जल संसाधनों का विकास

डा. संजीव दुबे

किसी भी राष्ट्र के विकास हेतु मानदण्डों का निर्धारण करने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि वह राष्ट्र विकास कार्यों के लिए अपने विभिन्न संसाधनों का कैसा उपयोग कर रहा है। किसी भी राष्ट्र का विकासोन्मुख होना तभी संभव है जब वह अपने पास उपलब्ध, समस्त संसाधनों का उचित प्रकार से, दोहन करे। कृषि क्षेत्र की क्षमता का भरपूर दोहन करने के लिए जल अनिवार्य घटक है। इसलिए जल संसाधनों का अधिकतम विकास और प्रभावकारी उपयोग अत्यंत महत्वपूर्ण है।

जल संसाधन क्षमता और विकास

भारत की 74 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। इसमें श्रम शक्ति का लगभग 64 प्रतिशत हिस्सा कृषि से आजीविका प्राप्त कर रहा है। देश में तीन चौथाई वर्षा वर्ष के चार महीनों (जून–सितम्बर) में होती है। इस वर्षा से अनेक क्षेत्रों में छोटी नदियां बहने लगती हैं और जलाशय तथा तालाब भर जाते हैं। इससे देश में सिंचाई और जल आपूर्ति प्रणालियां कायम रहती हैं।

देश की नदी प्रणाली में 1869 घन कि.मी. पानी होने का अनुमान है। इसमें से 690 घन कि.मी. पानी इस्तेमाल करने के योग्य है। इसके अतिरिक्त भूमिगत जल का 432 घन कि.मी. होने का अनुमान है। देश की विस्फोटक जनसंख्या वृद्धि, बड़े पैमाने पर शहरीकरण और औद्योगीकरण के कारण वर्ष 1955 में 5,277 घन मीटर प्रति व्यक्ति जल उपलब्ध था जो 1998–99 में घटकर 1970 घन मीटर रह गया है। नदी–नालों में पानी की बढ़ती

जल संसाधनों को राष्ट्रीय सम्पत्ति घोषित कर इनका विकास किया जाना चाहिए

हुई कमी को देखते हुए स्थिति और भी गंभीर हो सकती है। भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय एकीकृत जल संसाधन विकास योजना ने दिसम्बर 1999 में जारी रिपोर्ट में बताया है कि देश में कुल 1953 घन कि.मी., का जल संसाधन होने का अनुमान है। सन् 2010 तक 694 से 710 घन कि.मी., 2025 तक 784 से 850 घन कि.मी. और 2050 तक 973 से 1180 घन कि.मी. कुल जल आवश्यकता का अनुमान किया गया है।

सिचाई क्षमता

जल, जो जीवन तथा आर्थिक विकास के लिए अति आवश्यक है, दिनों–दिन सिमटती राष्ट्रीय सम्पत्ति होता जा रहा है। वर्ष 1983 में गठित राष्ट्रीय जल संसाधन परिषद् में एक प्रस्ताव पारित किया गया कि देश की राष्ट्रीय एकता और आर्थिक विकास की आधारभूत आवश्यकता – जल सम्पदा – का सुनियोजित विकास किया जाएगा। आठवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक सृजित सिंचाई क्षमता 232.6 लाख हेक्टेयर हो गई है जो कि तालिका 1 से स्पष्ट है :

तालिका से स्पष्ट है कि वृहद् और मध्यम सिंचाई परियोजनाओं से देश की सिंचाई क्षमता (1992–93) में 210.4 लाख हेक्टेयर क्षमता विकसित की गई। वर्ष 1998–99 तक कुल सृजित सिंचाई क्षमता 248.2 लाख हेक्टेयर हो गई थी। वार्षिक योजना (1999–2000) के लिए लक्ष्य 10.4 लाख हेक्टेयर का रखा गया है।

जलाशय भंडारण और उनका अतिदोहन

देश के विभिन्न भागों में 68 महत्वपूर्ण जलाशयों की भंडारण स्थिति की मानीटरी केन्द्रीय जल आयोग द्वारा की जाती है। 294 हजार लाख घन मीटर के पूर्ण जलाशय स्तर पर कुल क्षमता की तुलना में इन जलाशयों में सितम्बर 1999 के अंत तक कुल सक्रिय भंडारण 953 हजार लाख घन मीटर थी।

हाल ही में प्रकाशित जल संसाधन विभाग के सर्वेक्षण के अनुसार देश के 8 बड़े राज्य ऐसे हैं जिन्होंने अपने भूमिगत जल भंडार और जलाशय भंडारण का अतिदोहन कर लिया है। तालिका 2 में ऐसे अतिदोहन राज्यों का वर्गीकरण दिया गया है।

तालिका–1

विकसित और उपयोग में लाई गई सिंचाई क्षमता का योजनावार ब्यौरा

योजना अवधि	परिव्यय / व्यय (करोड़ रु. में)	सृजित क्षमता के दौरान	सृजित क्षमता कुल
पहली योजना (1951–56)	376	25.0	25.0
दूसरी योजना (1956–61)	380	21.3	46.3
तीसरी योजना (1961–66)	576	22.4	68.7
वार्षिक योजना (1966–69)	430	15.3	84.0
चौथी योजना (1969–74)	1242	26.0	110.0
पांचवीं योजना (1974–78)	2516	40.2	150.2
वार्षिक योजना (1978–80)	2079	18.9	169.1
छठी योजना (1980–85)	7369	10.9	180.0
सातवीं योजना (1985–90)	11107	22.22	202.2
वार्षिक योजना (1990–92)	5459	8.2	210.4
आठवीं योजना (1992–97)	21669	22.2	232.6
वार्षिक योजना (1997–98)	7570	6.8	239.4
वार्षिक योजना (1998–99)	9326	8.8	248.2
वार्षिक योजना (1999–2000) (परि व्यय)	956 (लक्ष्य)	(प्रत्यांशित) 1.04	

स्रोत – योजना आयोग, भारत सरकार।

तालिका 2 से स्पष्ट है कि देश के 8 ऐसे राज्य अतिदोहन (100 प्रतिशत) और डार्क (100 से 85 प्रतिशत) की श्रेणी में आ गए हैं। वर्तमान समय में जल संकट एक गंभीर रूप धारण करता जा रहा है। ऐसी स्थिति में इन आठ राज्यों की स्थिति तो अति गंभीर परिणाम सूचक दर्शा रही है। इन ब्लाकों में स्थानीय संस्थाओं और अन्य सरकारी तंत्रों को सतर्क रहने की आवश्यकता है। आज जल भंडारों के अत्यधिक दोहन से देश के 4,272 ब्लाकों में से 231 को अत्यधिक दोहन वाले वर्ग में रखा गया है तथा 107 ब्लाक 'डार्क' हैं अर्थात् जहां भूमिगत जल का 85 प्रतिशत से अधिक दोहन हो चुका है। इसके साथ आंध्र प्रदेश में 1,104 ब्लाकों में से 6 को अत्यधिक दोहित तथा 24 मंडलों को 'डार्क' वर्ग में रखा गया है। इसी प्रकार गुजरात में 184 तालुकाओं में 12 अत्यधिक दोहित और 14 तालुका 'डार्क' हैं तथा महाराष्ट्र में 1,503 जल संभरों में से 34 'डार्क' हैं। केन्द्रीय भूमिगत जल बोर्ड के अनुमान के अनुसार अब तक उपलब्ध भूमिगत जल संसाधनों के 32 प्रतिशत हिस्से का दोहन किया जा चुका है। भूमिगत जल के अत्यधिक दोहन से इसके जल स्तर में गिरावट आई है तथा तटवर्ती क्षेत्रों में जमीन के अंदर खारा पानी घुस गया है। कुछ स्थानों में भूमिगत जल में प्रदूषण की मात्रा बढ़ती जा रही है, जिससे यह पीने योग्य नहीं रह गया है और कुछ मामलों में यह स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो गया है।

प्रमुख सुझाव तथा निष्कर्ष

सन् 2000 तक सबको पेयजल उपलब्ध कराने, कृषि योग्य भूमि को सिंचित और उद्योगों तथा कारखानों को पर्याप्त जल देने का लक्ष्य पूरा करना पुरानी सदी की चुनौती थी। प्रथम से नवीं पंचवर्षीय योजनाओं में पेयजल, और सिंचाई हेतु प्राथमिकताएं तय हुईं, लक्ष्य निर्धारित हुए। परन्तु सामान्य जन में "जन–चेतना व जन–जागरण" का अभाव होने के कारण हम स्वयं जल संकट के दोषी हैं। भूमिगत जल, नदियों के जल का उपयोग, जल संसाधन परियोजनाएं, और राष्ट्रीय वाटरशेड आदि से संबंधित प्रमुख योजनाएं, बड़े–बड़े बांध बनाए

तालिका–2

अतिदोहित के रूप में प्रमुख राज्य

क्र.	राज्य	जिलों की संख्या	ब्लाक/मंडलों/तालुकों/जल संभरों की संख्या	अतिदोहित व डार्क ब्लाकों की संख्या	प्रतिशत में
1.	आन्ध्रप्रदेश	23	1104	30	2.71
2.	गुजरात	19	184	26	14.13
3.	हरियाणा	16	108	51	47.23
4.	कर्नाटक	19	175	18	10.29
5.	पंजाब	12	118	70	59.32
6.	राजस्थान	30	236	66	22.73
7.	तमिलनाडु	21	384	97	25.26
8.	उत्तर प्रदेश	63	895	41	4.58

स्रोत – जल संसाधन मंत्रालय, वार्षिक रिपोर्ट, 1999–2000

व कार्यान्वित किए जा रहे हैं। कुछ राज्यों में भूमिगत जल के अत्यधिक दोहन को रोकने के लिए भूजल–कानून बनाया जा चुका है।

केन्द्रीय सरकार ने जल की भावी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय जल नीति, त्वरित सिंचाई लाभ कार्यक्रम, निर्माणाधीन चुनिंदा वृहद् और मध्यम सिंचाई और बहुउद्देशीय परियोजनाओं को पूर्ण करना लक्ष्य रखा है। अंत में जल संसाधन को एक बहुमूल्य राष्ट्रीय सम्पत्ति के रूप में स्वीकार करते हुए, इसका विकास राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में किया जाए और उपलब्ध सतही तथा भूजल संसाधनों के किफायती उपयोग को बढ़ावा दिया जाए तभी हम गर्व से कह सकेंगे "यदि कुशलता से प्रबंधित है जल, देश का भविष्य है उज्ज्वल"। ❑

कुरुक्षेत्र की विज्ञापन दरें

	सामान्य दर		चार विज्ञापनों की अनुबंध दर		विशेषांक की दरें	
	रंगीन	श्वेत/श्याम	रंगीन	श्वेत/श्याम	रंगीन	श्वेत/श्याम
पूरा पृष्ठ	8000	4000	25600	12800	12000	6000
आधा पृष्ठ	5000	2500	16000	8000	7000	4000
पिछला आवरण पृष्ठ	13000	7000	41600	22400	19000	10000
अन्दर का (तीसरा) आवरण पृष्ठ	11000	6000	35200	19200	16000	9000

पत्रिका के आकार संबंधी अन्य जानकारी

पूरा आकार : 21 से.मी. 28 से.मी.
मुद्रित क्षेत्र : 17 से.मी. 24 से.मी.
मुद्रण प्रणाली : आफसेट प्रेस
स्वीकार्य विज्ञापन सामग्री : केवल आर्टवर्क/आर्टपुल/पोजिटिव
विज्ञापन स्वीकार करने की अंतिम तिथि : 60 दिन पहले
पता जिस पर विज्ञापन भेजा जाए : विज्ञापन एवं प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
ईस्ट ब्लाक 4, लेवल 7,
आर.के. पुरम, नई दिल्ली 110066
टेलीफोन : 6105590 (कार्यालय)
6116185 (निवास)
फैक्स : 6100207

डिमांड ड्राफ्ट निदेशक, प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय हो
हम विज्ञापन एजेंसियों को 15 प्रतिशत कमीशन देते हैं।
किसी पत्रिका के दो भाषाओं के संस्करणों के एक ही अंक के लिए विज्ञापन जारी करने पर 10 प्रतिशत की छूट दी जाती है।

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना की सार्थकता

एच.पी. सिंह

देश में फसलों के मानसून पर निर्भर होने के कारण अनिश्चितता बनी रहती है। इस अनिश्चितता के कारण सरकार ने राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना शुरू की है जिससे प्राकृतिक आपदाओं या रोगों के कारण फसल नष्ट होने से किसान को नुकसान न हो। इस योजना का लाभ देने के लिए सभी बैंकों के शाखा प्रबंधकों और फील्ड अफसरों को प्रशिक्षित किया जा रहा है। लेखक का कहना है कि यह योजना जिन राज्यों में अभी लागू नहीं की गई है, वहां भी इसे लागू कर दिया जाना चाहिए।

सरकार ने कृषकों के हितों की रक्षा करने, ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुधारने और राष्ट्रीय आय में कृषि का अधिक हिस्सा बढ़ाने की दृष्टि से 1999 में राष्ट्रीय कृषि बीमा नामक योजना लागू की है जिसके मुख्य उद्देश्य हैं:

- प्राकृतिक आपदाओं तथा रोगों के कारण किसी भी बीमा की गई फसल के नष्ट होने की स्थिति में किसानों को वित्तीय सहायता तथा बीमा लाभ देना,
- आपदा वर्षों में कृषि आय स्थिर रखना,
- किसानों को कृषि में प्रगतिशील कृषि तकनीकों, उच्च मूल्य आदानों तथा उच्चतर प्राद्योगिकी का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करना,
- खाद्य फसलों और तिलहन के उत्पादन को समर्थन तथा उसे बढ़ावा

योजना की मुख्य विशेषता है कि इसमें सभी प्रकार की खाद्य फसलों तथा नकदी फसलों जैसे – गन्ना, कपास, आलू आदि को सम्मिलित किया गया है।

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना को सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के लिए अनिवार्य न करके राज्यों तथा केंद्र शासित प्रदेशों की इच्छा पर छोड़ दिया गया है। राज्य और केंद्र शासित प्रदेश अपनी इच्छा अनुसार अपने राज्य में लागू कर सकते हैं।

सभी प्रकार के किसानों, बटाईदारों, काश्तकारों को इस योजना के लिए योग्य माना गया है, वैसे सभी किसान जो पूर्व सूचना देकर फसल उगा रहे हैं और वित्तीय संस्थाओं से मौसमी ऋण लेते हैं, उनके लिए यह अनिवार्य है।

जोखिम के स्वरुप

- तूफान, चक्रवात, ओला, समुद्री तूफान, टाइफून, हरीकेन आदि
- बाढ़, जल प्लावन और भू–स्खलन
- प्राकृतिक रूप से आग लगना और बिजली गिरना
- सूखा, रोग आदि

कोई किसान वाणिज्यिक दरों पर प्रीमियम

के भुगतान द्वारा अपनी फसल का बीमा पूर्व सूचित क्षेत्र के औसत उत्पादकता के 150 प्रतिशत तक के मूल्य पर भी करवा सकता है।

छोटे तथा सीमान्त किसानों के सन्दर्भ में प्रीमियम पर 50 प्रतिशत राज्य सहायता दिए जाने की अनुमति है, जिसे केंद्र और राज्य सरकार द्वारा बराबर–बराबर वहन किया जाएगा।

क्षतिपूर्ति की दृष्टि से सभी क्षेत्रों का 10 वर्ष के उपज आंकड़ों के आधार पर तीन श्रेणी–कम जोखिम, मध्यम जोखिम तथा अधिक जोखिम वाला क्षेत्र अर्थात 90 प्रतिशत, 80 प्रतिशत तथा 60 प्रतिशत के आधार पर सभी फसलों के लिए उपलब्ध होगा। इकाई क्षेत्र के बीमित कृषकों के लिए बीमांकित दरों पर आधारित अतिरिक्त प्रीमियम के भुगतान पर अधिक क्षतिपूर्ति का विकल्प होगा।

बीमा इकाई में किसी फसल के लिए प्रारम्भिक पैदावार या गारंटी शुदा पैदावार, चावल और गेहूं के मामले में पिछले तीन साल की औसत पैदावार तथा अन्य फसलों के मामले में पांच वर्षों की औसत उपज, क्षतिपूर्ति के लिए संचालक औसत है।

ऋणी किसान वित्तीय संस्थाओं, जहां से फसली ऋण लिया गया है तथा गैर ऋणी किसान, वित्तीय संस्थाओं से अथवा सीधे बीमा कम्पनी से बीमा करवा सकते हैं।

वर्तमान में योजना क्रियान्वयन के लिए भारतीय साधारण बीमा निगम को अभिकरण के रूप में कार्य करने के लिए अधिकृत किया गया है। बाद में धीरे–धीरे भारतीय साधारण बीमा निगम के तत्वावधान में एक विशिष्ट संगठन की स्थापना की जाएगी।

योजना के लाभ

इस योजना से निम्न लाभ अपेक्षित हैं –

- कृषि ऋण को बचाए रखने में सहायता
- फसल खराब होने की स्थिति में किसानों को वित्तीय सहायता
- कृषि में उच्च तकनीक अपनाने के लिए प्रोत्साहन

प्रशिक्षण

योजना को लागू करने के लिए सभी बैंकों के शाखा प्रबंधकों, फील्ड अफसरों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है ताकि किसी प्रकार की भूल से बचा जा सके। प्रशिक्षण व्यवस्था का दायित्व भारत सरकार के कृषि मन्त्रालय के अधीन उपक्रम राष्ट्रीय सहकारी प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली को सौंपा गया है। राष्ट्रीय सहकारी प्रशिक्षण परिषद नई दिल्ली भारतीय साधारण बीमा निगम के सहयोग से देश भर में स्थित पांच क्षेत्रीय सहकारी प्रबन्ध संस्थान तथा 14 सहकारी प्रबन्ध संस्थान के संकाय सदस्यों को प्रशिक्षण दे चुकी है, और इन प्रशिक्षकों को निर्देश दिया गया है कि राज्य मुख्यालय स्तर पर स्थित भारतीय साधारण बीमा निगम के सहयोग से वित्तीय संस्थाओं (बैंकों) के शाखा प्रबन्धकों/फील्ड अफसरों को प्रशिक्षण उपलब्ध कराए।

भारत सरकार की इस कृषक लाभकारी योजना को अभी कुछ प्रदेशों में लागू नहीं किया गया। भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है। देश में कृषि के महत्व को देखते हुए इस योजना को उन सभी राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों में लागू किया जाना चाहिए जहां अब तक इसे लागू नहीं किया गया है। ❑

लघु–कथा

अपशगुन

जसविंदर शर्मा

सुबह–सुबह खबर मिली कि निखिल के दादाजी गुजर गए हैं तो मन खराब हो गया। अभी परसों ही तो हमारे घर आए थे। पिताजी के पास अक्सर आकर बैठते थे। दोनों पहले एक ही आफिस में थे न।

दोपहर तक सभी आदमी व औरतें निखिल के घर हो आए। मैं शाम को दफ्तर से लौट कर उनके घर जाने लगा तो पता चला कि उनका दाह संस्कार चार बजे ही कर दिया गया है। सुनकर बड़ा अचम्भा लगा।

रात खाने की मेज पर यही किस्सा छिड़ गया। पिताजी बोले, 'कैसा जमाना आ गया है, एक ही बेटा है, कह रहा है कि किरया–कर्म हरिद्वार कर आएंगे। छुट्टी नहीं मिल रही उसे। अजी ऐसा कौन सा डिपार्टमेंट है जहां पिता के मरने पर भी छुट्टी न मिलती हो।'

श्रीमती ने निखिल की मम्मी की राम कहानी छेड़ दी कि कैसे मिसेज वर्मा अपने ससुर को ऊपर छत वाले कमरे में रखती थी। ड्राइंग रूम में बैठने नहीं देती थी। वह बोली, 'पता है वर्मा साहब की अर्थी आज शाम इसलिए उठवा दी क्योंकि कल निखिल का जन्म दिन है। कल अर्थी उठती तो अपशगुन होता। अभी वर्मा साहब की कानपुर वाली लड़की पहुंची नहीं कि दाह संस्कार हो गया। वह भी बेचारी पिता के अन्तिम दर्शन कर लेती।'

शुरु में एक बार तो मुझे यकीन न हुआ मगर श्रीमती ने तो जैसे भानुमति का पिटारा खोल दिया था। पिताजी तो खाना छोड़कर उठ गये थे। मुझे अच्छा खासा यकीन आता जा रहा था। ❑

11 जुलाई, विश्व जनसंख्या दिवस पर विशेष

जनसंख्या वृद्धि एवं आर्थिक विकास*

डा. ओम प्रकाश सिंह**

बेतहाशा बढ़ती जनसंख्या ने देश में कुछ गम्भीर समस्याएं पैदा कर दी हैं। गरीबी, बेरोजगारी, वस्तुओं का अभाव, पर्यावरण असंतुलन जैसी समस्याओं का कोई हल दिखाई नहीं दे रहा। हमें जनसंख्या नियंत्रण के लिए ठोस उपाय करने चाहिए। अर्थ व्यवस्था की ऐसी प्रणाली अपनानी चाहिए जिससे ज्यादा से ज्यादा लोगों को रोजगार मिले और गरीबी कम हो। गरीबी और जनसंख्या वृद्धि का गहरा संबंध है। इसके अलावा शिक्षा, विशेष रूप से महिला शिक्षा पर जोर दिया जाए। स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार किया जाए और परिवार कल्याण कार्यक्रमों के प्रति लोगों में वैज्ञानिक सोच उत्पन्न की जाए। इसके लिए स्वयंसेवी संगठनों की मदद भी ली जा सकती है।

भारत में जनसंख्या वृद्धि से अनेक समस्याओं का जन्म हुआ है। तीव्रता से बढ़ती आबादी और विशेषकर ग्रामीण आबादी को नियंत्रित करने के सरकारी और गैर सरकारी प्रयासों के अपेक्षित परिणाम न मिलने से और उत्पादन के जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में न बढ़ने से इन समस्याओं का उचित समाधान नहीं खोजा जा सका है। यद्यपि यह दुर्भाग्य ही है कि भारत में आबादी और विकास योजनाओं को ठीक से परिभाषित नहीं किया गया। आबादी को एक संभावित संसाधन न मानकर इसे बेरोजगारी तथा निर्धनता के एक स्रोत के रूप में माना गया। परिणामस्वरूप आबादी एक सम्पत्ति के बजाय जिम्मेदारी बन गई है। वास्तव में भारत जैसे देश में प्रमुख समस्या अल्प उत्पादन की है न कि अधिक जनसंख्या की। जैसे–जैसे आबादी बढ़ती है उसकी जरूरतें भी बढ़ती हैं तथा उत्पादन उस औसत में नहीं बढ़ता है। परिणामस्वरूप अत्यधिक दोहन से पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ता है और पर्यावरणीय क्षति होती है। साधनों की कमी, उपलब्ध साधनों की दोहन क्षमता का अभाव इत्यादि ऐसे तत्व हैं जो जनसंख्या वृद्धि से सीधे जुड़े हैं। यह समस्याएं किसी भी देश की आर्थिक विकास की गति को कमजोर करने का कार्य करती हैं। उल्लेखनीय है कि आर्थिक विकास के दौर में भारत के लिए जनसंख्या विस्फोट 'टाइम बम' के समान है।

उपलब्ध संसाधन तथा मानव दोनों ही प्रकृति–जन्य सम्पत्तियां हैं परंतु दोनों में मूलभूत अंतर है। प्रथमतः मानव उत्पादन के साधनों में भागीदार होने के साथ–साथ उपभोक्ता भी है जबकि प्राकृतिक संसाधनों का निरंतर उपभोग किए जाने से उनकी कमी होना स्वाभाविक है। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि प्रकृति–जन्य संसाधनों की उपलब्धता सीमित है। घटती हुई प्रति व्यक्ति भूमि, खेतों का अनार्थिक आकार, बढ़ता हुआ जल संकट, घटते हुए वन संसाधन, औद्योगिक क्षेत्र में सीमित रोजगार के अवसर, सीमित सामाजिक–आर्थिक बाह्य संरचना, बिगड़ता पर्यावरण तथा असंतुलित पारिस्थितिकीय, बेकारी, भुखमरी तथा निर्धनता और आवश्यक वस्तुओं का अभाव आदि का जनसंख्या वृद्धि से घनिष्ठ संबंध है। ये सभी समस्याएं सम्मिलित रूप से देश के आर्थिक तथा सामाजिक विकास में बाधा डालती हैं।

* दयानन्द गर्ल्स कालेज, कानपुर द्वारा आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी – जनसंख्या एवं आर्थिक विकास में प्रस्तुत।

** प्राचार्य, कुम्हरावां डिग्री कालेज, कुम्हरावा, लखनऊ।

ऊंची जन्म दर

वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार देश की जनसंख्या 84.63 करोड़ थी। इसमें 43.42 करोड़ पुरुष तथा 40.71 करोड़ महिलाएं थीं। इन आंकड़ों के आधार पर लिंग अनुपात (प्रति हजार पुरुषों पर महिलाओं की संख्या) 927 था। योजना आयोग द्वारा अगस्त 1996 में गठित जनसंख्या अनुमानों पर तकनीकी दल की रिपोर्ट में लगाए गए अनुमानों के अनुसार अगली जनगणना 2001 में जनसंख्या 101.24 करोड़ होने का अनुमान है जिसमें 52.38 करोड़ पुरुष तथा 48.86 करोड़ महिलाएं होंगी। समान रूप 2016 में देश की आबादी बढ़कर 126.35 करोड़ होने का अनुमान है। देश में जनसंख्या वृद्धि दर में 1961 के उपरांत एक बड़ी उछाल दृष्टिगोचर होती है तथापि प्रति दशक उसमें थोड़ी सी गिरावट लक्षित होती है। परंतु जनसंख्या वृद्धि दर आज भी 2 प्रतिशत सालाना से अधिक बनी हुई है। (सारणी सं. 1) वर्तमान समय में हमारे देश में प्रत्येक एक सेकेण्ड में एक बच्चे का जन्म होता है तथा एक दिन में लगभग 86,000 बच्चे देश की आबादी में जुड़ जाते हैं। देश की आबादी इतनी तीव्र गति से बढ़ रही है कि प्रत्येक वर्ष एक आस्ट्रेलिया के

मां स्वस्थ तो शिशु भी स्वस्थ और परिवार न हो अस्त व्यस्त

बराबर जनसंख्या इसमें जुड़ जाती है। सांख्यिकीय आंकड़ों से स्पष्ट है कि 1901 से 1951 तक प्रत्येक दशक में वार्षिक वृद्धि दर 1.5 प्रतिशत से कम थी। यहां तक 1911–1921 के मध्य जनसंख्या के घटने का संकेत मिलता है जबकि 1951 के उपरांत 1991 तक हर दशक में यह 2 प्रतिशत से अधिक पाई गई। 1941–51 के मध्य वार्षिक वृद्धि दर 1.3 प्रतिशत थी जो 1981–91 में क्रमशः 2.1 प्रतिशत हो गई। उल्लेखनीय है कि देश में 'बीमारू' (बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान तथा उत्तर प्रदेश) राज्य अकेले ही लगभग देश की कुल आबादी का 40 प्रतिशत योगदान देते हैं। इन राज्यों में जनसंख्या नियंत्रण के प्रयासों की असफलता का पूरे देश पर विकराल प्रभाव पड़ता है। इन राज्यों की प्रमुख जनांकीय विशिष्टता ऊंची जन्म दर, ऊंची मृत्यु दर, प्रति महिला उच्च प्रजनन दर तथा निम्न दाम्पत्य सुरक्षा दर है।

वर्तमान समय में देश की जनसंख्या विश्व की आबादी का 16 प्रतिशत है जबकि भूमि केवल 2.4 प्रतिशत है। जनसंख्या की दृष्टि से भारत का स्थान चीन के बाद विश्व में दूसरा है। आशा है कि देश की आबादी 120 करोड़ पर स्थिर करने में लगभग 50–60 वर्ष लगेंगे। जब प्रजनन दर शून्य हो सकेगी। यह अनुमान लगाया गया है कि देश में हर वर्ष 1.6 करोड़ लोग बढ़ जाते हैं जिससे कपड़े, आवास योजना, शिक्षा, स्वास्थ्य, स्कूली शिक्षा आदि के लिए अतिरिक्त संसाधनों की मांग बढ़ जाती है।

मृत्यु दर में ज्यादा गिरावट

देश में जन्म–दर, मृत्यु–दर तथा प्राकृतिक वृद्धि दर सारणी सं. 3 में दर्शाई गई है। देश में सामाजिक–आर्थिक कार्यक्रमों के चलते जन्म–दर तथा मृत्यु–दर में लगातार गिरावट आई है। परंतु मृत्यु–दर में गिरावट जन्म दर में आई गिरावट से अधिक है। उल्लेखनीय है कि शहरी क्षेत्रों में सामाजिक–आर्थिक कारणों तथा बेहतर स्वास्थ्य सुविधाओं के कारण जन्म– दर तथा मृत्यु–दर दोनों में ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक गिरावट आई है। लेकिन अनेक विकसित तथा यहां तक कि विकासशील राष्ट्रों की तुलना में भारत में जन्म–दर बहुत उच्च बनी हुई है। इसके प्रमुख कारणों में निम्न साक्षरता दर, विशेषकर महिला साक्षरता दर, उच्च शिशु मृत्यु–दर, विवाह के समय कम आयु, कृषि में बहुत अधिक आबादी का संलग्न होना, अधिक बच्चों की चाहत, विशेषकर लड़कों की चाहत, आधुनिक गर्भ निरोधक उपायों का कम प्रयोग आदि शामिल हैं। आबादी में पुनः गिरावट लाने हेतु जन्म दर में कमी लाने के लिए गंभीर प्रयास करने होंगे क्योंकि मृत्यु दर (प्रति 1000 जीवित जन्मों पर) एक स्तर पर स्थिर बनी हुई है।

शिशु मृत्यु दर, स्वास्थ्य सुविधाओं, की उपलब्धता तथा महिलाओं को स्वास्थ्य देखभाल की जानकारी, पर निर्भर करती है। जन्म–दर तथा मृत्यु–दर की समान ही ग्रामीण क्षेत्रों के शिशु मृत्यु–दर (प्रति 1000 जन्मों में) 100 के ऊपर थी जो 1996 में घटकर 72 रह गई तथापि विकसित और यहां तक कि विकासशील राष्ट्रों की तुलना में यह दर बहुत अधिक है।

वैज्ञानिक सोच पैदा करने में असफलता

भारत में परिवार कल्याण कार्यक्रम की उपलब्धियों के बारे में कहा जा सकता है कि वर्ष 1997 में देश में दम्पत्ति सुरक्षा दर 45.5 प्रतिशत आंकी गई थी जो 1991 की तुलना में 1.3 प्रतिशत अधिक है और 1981 की तुलना में लगभग दूनी है। इसी प्रकार रोके गए जन्मों की संख्या में भी आशातीत वृद्धि हुई है। लेकिन सच्चाई यह है कि देश में एक बड़ी संख्या में योग्य दम्पति सुरक्षा कवच में नहीं लाए जा सके हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि गरीबों को परिवार नियोजन

हेतु उत्प्रेरित नहीं किया जा सका क्योंकि उनका मानना है कि अधिक बच्चे आमदनी बढ़ाने तथा बुढ़ापे में सहायक सिद्ध होते हैं। यहां तक उत्प्रेरण कारकों में शिक्षा, घर के बाहर रोजगार के अवसर तथा गर्भ निरोधकों तक सुलभ पहुंच के न होने के कारण निर्धनों की परिवार नियोजन कार्यक्रमों में सक्रिय सहभागिता नहीं सुनिश्चित की जा सकी। जनसंख्या वृद्धि की रोकथाम के लिए चलाए जा रहे विशेष अभियान में जनता की सहभागिता का अत्यधिक अभाव रहा है तथा सरकारी मशीनरी और स्वैच्छिक संस्थाओं के माध्यम से चलाए जा रहे कार्यक्रमों से किसी भी प्रकार का वैज्ञानिक दृष्टिकोण समाज में पैदा नहीं हुआ। यदि सरकार इस समस्या से ठीक से निपटना चाहती है तो उसे ग्रामीण स्तर तक, जनता में एक वैज्ञानिक सोच उत्पन्न करनी होगी, जो तभी संभव है जब संकीर्ण परम्पराओं को निचले स्तर तक तोड़ा जा सके और लोगों के अंदर तक वैज्ञानिक दृष्टिकोण पैदा करके, समाज को एक जीवन्त गति प्रदान की जा सके। यह तभी संभव है जब सरकार और स्वैच्छिक संस्थाएं पूरे मनोयोग से, प्रसार–प्रचार के माध्यमों का प्रयोग करके तथा राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत दृष्टि से इसे एक नई क्रान्ति का रूप प्रदान कर सकें।

पिछले कई दशकों से भारत में जनसंख्या घनत्व बढ़ता जा रहा है। बढ़ता हुआ जनसंख्या घनत्व जीवन के लिए आवश्यक साधनों तथा एकीकृत सेवाओं की मांग करता है। ऐसा न होने पर हमारी नागरिक सेवाओं पर दबाव पड़ता है और लोगों को न्यूनतम आवश्यक सुविधाएं नहीं मिल पाती हैं। इसके परिणाम स्वरूप उनका जीवन नारकीय बन जाता है। इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि आज एक चौथाई आबादी शहरों में रहती है और कुछेक नगरों तथा महानगरों की आबादी तो एक करोड़ से कहीं अधिक है। यहीं नहीं नगरों में बेहतर शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार के अवसर तथा बुनियादी सेवाओं के कारण बड़ी संख्या में आबादी पलायन कर रही है इससे नागरिक सेवाएं चरमरा गई हैं। अधिकांश लोगों को शहरों या नगरों में आवासीय समस्या के कारण अपनी आय की सीमा के अंतर्गत आवास नहीं मिल पाता और उन्हें झोपड़पट्टियों में रहने को विवश होना पड़ता है। आज लगभग एक चौथाई यानी 25 प्रतिशत शहरी आबादी झोपड़पट्टियों में रहने को बाध्य है। कुछेक नगरों या महानगरों में तो यह औसत एक तिहाई से 40 प्रतिशत तक है। हमारे देश में 1991 में 2.29 करोड़ आवासों की कमी का अनुमान था जो 1995 में 2.18 करोड़ आंका गया। अनुमान है कि सन् 2000 में लगभग दो करोड़ मकानों की कमी का सामना करना पड़ेगा।

बेरोजगारी

आजादी के लगभग पांच दशक पूरे कर लेने और आठ पंचवर्षीय योजनाओं के क्रियान्वयन के उपरांत भारत में बेरोजगारी की एक विकट समस्या बनी हुई है। यद्यपि बेरोजगारी की समस्या एक अंतर्राष्ट्रीय समस्या है तथापि विकसित देशों की तुलना में विकासशील देशों में यह समस्या अधिक विकराल है। जनसंख्या वृद्धि के साथ श्रम शक्ति में भी वृद्धि होती है। जनंसख्या वृद्धि तथा निर्धनता के बीच सम्पर्क स्थापित करने में रोजगार का महत्वपूर्ण योगदान रहता है।

शिशुओं के स्वास्थ्य पर ध्यान देकर मृत्यु दर को कम किया जा सकता है

इससे संभावित अनेक मुद्दे हमारे सामने हैं : (1) किस दर पर अर्थव्यवस्था में रोजगार सृजन संभव है? (2) इन रोजगारों का सृजन कहां होगा? (3) श्रम शक्ति में वृद्धि से मजदूरी दर पर क्या प्रभाव पड़ेगा? (4) श्रम शक्ति में वृद्धि की तुलना में रोजगार में कम वृद्धि होने पर क्या वास्तविक मजदूरी का बढ़ना संभव होगा? (5) आम बाजार में बेराजगारों की संख्या अधिक होने पर श्रम संघों की रणनीति क्या होगी? (6) बढ़ती हुई बेरोजगारी की स्थिति में परम्परागत श्रम संबंधों पर क्या प्रभाव पड़ेगा? (7) क्या रोजगार पाने की प्रतिस्पर्धा से परम्परागत श्रम संबंध टूट जाएंगे? जनसंख्या वृद्धि, गरीबी और रोजगार के बीच उभरते हुए अर्न्तसंबंध को सही ढंग से समझने हेतु इन सभी प्रश्नों की जांच आवश्यक है। 1990 में योजना आयोग के अनुमान से देश में 488.8 लाख व्यक्ति बेरोजगार थे जिसमें 299.5 लाख (61.27 प्रतिशत) ग्रामीण क्षेत्र में तथा 189.3 लाख (38.73 प्रतिशत) शहरी क्षेत्र में थे। ग्रामीण क्षेत्र में 197.8 लाख पुरुष (66.04 प्रतिशत) तथा 101.7 लाख महिलाएं बेरोजगार थीं जबकि शहरी क्षेत्र में कुल 189.3 लाख व्यक्ति बेरोजगार थे जिसमें 77 प्रतिशत पुरुष थे।

इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि दरिद्रता और बेरोजगारी को अलग नहीं किया जा सकता है। एक व्यक्ति गरीब है क्योंकि वह बेरोजगार है। वह बेरोजगार है क्योंकि वह गरीब है। गरीब होने के कारण उसके पास स्वरोजगार शुरू करने के लिए साधन नहीं होते हैं। इस सदंर्भ में कहना समीचीन है कि गरीब व्यक्ति अपनी सीमित आय का एक बड़ा भाग खाद्य पदार्थों को जुटाने में व्यय कर देता है जबकि उसकी तुलना में अधिक आय वाला व्यक्ति बहुत कम भाग खाद्य पदार्थों पर व्यय करता है। यद्यपि देश में 1940 के दशक जैसी महाभुखमरी तो नहीं आई है तथापि आज भी उड़ीसा के कालाहाण्डी तथा मध्य प्रदेश के टीकमगढ़ इलाकों में भुखमरी फैली हुई है। यहां निर्धनता स्थिर है। यहां की समस्या यह है कि लोगों ने प्रकृति का अत्यधिक दोहन कर पर्यावरण या पारिस्थितिकीय संतुलन गड़बड़ा दिया है। इस कारण यहां अकाल एक आम बात हो गई है। अनुमान है कि भारत को सन् 2030 में लगभग 4.5 करोड़ टन खाद्यान्न आयात करना पड़ेगा। ऐसा इसलिए क्योंकि देश में आबादी की वृद्धि दर की तुलना में खाद्यान्न उत्पादन नहीं बढ़ेगा। 1996–97 के दौरान देश में खाद्यान्न उत्पादन में 1.7 प्रतिशत सालाना वृद्धि हुई जबकि आबादी वृद्धि दर 1.9 प्रतिशत सालाना दर्ज की गई। देश की 35 प्रतिशत आबादी को एक समय खाने को नहीं है वहां देश की वैज्ञानिक प्रगति से इन लोगों पर बहुत अंतर नहीं पड़ता है। उल्लेखनीय है कि विश्व के अन्य राष्ट्रों की तुलना में भारत में सबसे अधिक निर्धन हैं। देश में लगभग 90 प्रतिशत आबादी दो अमरीकी डालर से कम रोजाना खर्च करती है जबकि आधे से अधिक आबादी एक अमरीकी डालर से कम खर्च करती है। यह भी अनुमान है कि 35 प्रतिशत आबादी अत्यधिक गरीब है अर्थात् 2,435 किलो कैलोरी प्रतिदिन का एक समय भोजन पा सकने में असमर्थ है।

जनसंख्या–वृद्धि से शिक्षा का घनिष्ठ संबंध है। यदि हमें जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करना है तो निःसंदेह शिक्षा को अधिक व्यापक बनाना होगा परंतु सच्चाई यह है कि देश में शिक्षा का स्तर बहुत असंतोषजनक है। 1991 में आधी से अधिक आबादी शिक्षित थी। शहरी क्षेत्रों में शिक्षा की दर 73.1 प्रतिशत तथा ग्रामीण क्षेत्रों में मात्र 44.7 प्रतिशत शिक्षा दर आंकी गई थी। यहां तक कि महिला साक्षरता दर मात्र 39.3 प्रतिशत पाई गई। अनुसूचित जातियों में शिक्षा दर 37.41 प्रतिशत तथा अनुसूचित जनजातियों में 29.6 प्रतिशत साक्षरता दर दर्ज की गई। कुछेक राज्यों तथा विशेषकर कुछ समुदायों में साक्षरता दर लगभग नगण्य बनी हुई है। शिक्षा दर का निम्न स्तर परिवार नियोजन के सरकारी और गैर सरकारी प्रयासों को निरर्थक कर देता है। शिक्षा विवेकपूर्ण तथा तर्क संगत रूप से व्यक्ति को सशक्त बनाती है। शिक्षा, विशेषकर महिला साक्षरता व्यक्ति के महत्वपूर्ण जनांकीय निर्णयों को लेने में निर्णायक भूमिका निभाती है। सच्चाई यह है कि देश में वर्तमान शिक्षा दर प्रति व्यक्ति आय बढ़ाने में अधिक उपयोगी नहीं साबित हो पाई है क्योंकि शिक्षा, विशेषकर तकनीकी शिक्षा तथा कौशल, की कमी के कारण अनेक लोग रोजगार के अवसरों से वंचित रह जाते हैं या फिर वर्तमान संसाधनों का सही उपयोग सुनिश्चित नहीं कर पाते हैं। विकसित राष्ट्रों में शिक्षा दर लगभग 100 प्रतिशत है और इसी कारण वहां प्रति व्यक्ति आय अपेक्षाकृत अधिक है। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि देश में कृषि क्षेत्र में सुधारों को ठीक ढंग से क्रियान्वित नहीं किया गया और यहां तक कि कृषि क्षेत्रों को लगभग उपेक्षित किया गया जबकि चीन जैसे राष्ट्रों में तो, आर्थिक सुधारों को सर्वप्रथम कृषि क्षेत्र में ही क्रियान्वित किया गया। आज भी कृषि क्षेत्र में अपेक्षित आधुनिकीकरण सुनिश्चित नहीं किया जा सका है। प्रति व्यक्ति भूमि की उपलब्धता जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में घटती है। साथ ही आबादी बढ़ने से खेती योग्य जमीन का विभाजन होता है। खेती के लिए पुरातन तकनीकें, सिंचाई क्षमता की कमी, व्यापारिक फसलों के अंतर्गत अपेक्षाकृत निम्न क्षेत्र, उन्नतशील बीजों, रासायनिक खादों, पौध संरक्षण उपायों तथा अधिक आय वाली फसलों की कमी आदि अनेक कारणों से कृषि से अपेक्षित लाभ नहीं पा रहे हैं। अधिकांश ग्रामीण आबादी कृषि क्षेत्र में अपनी आजीविका के लिए संलग्न है। देश में कृषि आधारित उद्योगों को बढ़ावा देने के बजाय लगभग उनकी उपेक्षा की गई। परिणामस्वरूप कृषि उद्योगों में रोजगार के अवसरों को अपेक्षित ढंग से नहीं सृजित किया जा सका। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि आज आजीविका को नवीन संभावित अवसरों में गैर कृषीय क्षेत्र प्रमुख हैं जो कृषि आधारित उद्योगों जैसे – दुग्ध व्यवसाय, रेशम कीट पालन, मछली पालन, फूलों की खेती, मशरूम खेती, खाद्य प्रसंस्करण, मुर्गी पालन, भेड़ पालन, तथा बकरी और सुअर पालन आदि से अपेक्षाकृत अधिक आय सुनिश्चित की जा सकती है। उल्लेखनीय है कि देश में योजनाकारों ने पूंजीगत तकनीक अपनाई इससे अधिक संसाधनों की मांग बढ़ी लेकिन श्रमिकों को रोजगार नहीं मिला जबकि हमें कम पूंजी लागत के उद्योगों जिसमें अधिक श्रमिकों को खपाया जा सकता था, को बढ़ावा देना चाहिए था। इस प्रकार निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि जनसंख्या नियंत्रण के हमें ठोस उपाय अपनाने होंगे तथा सामाजिक उत्प्रेरणा के कारकों को ध्यान में रखते हुए हमें शिक्षा स्तर को सुधारना होगा। शिक्षा ही एक मात्र सामाजिक क्रांति तथा बदलाव ला सकती है और रोजगार के अवसरों का लाभ लेते हुए श्रमिक अपनी आय बढ़ा सकते हैं। साथ ही हमें

स्वैच्छिक संस्थाओं की मदद से सामाजिक जागृति लानी होगी जिससे कि लोगों की मान्यता तथा विचारों को सकारात्मक रूप से बदला जा सके और वे विकास प्रक्रिया में सक्रिय भाग लेते हुए विकास अवरोधक तत्वों को नियंत्रित कर सकें। यद्यपि जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में संसाधनों को बढ़ा नहीं सकते तथापि हमें उत्पादन बढ़ाने हेतु वर्तमान संसाधनों को विवेक–पूर्ण ढंग से उनके उपयोग को सुनिश्चित करना होगा और सतत् विकास के प्रतिमानों को बढ़ावा देना होगा तभी हम शायद पर्यावरणीय संतुलन को सुनिश्चित कर पाएंगे। ❑

सारणी सं. 1
भारत में औसत वार्षिक जनसंख्या वृद्धि

अवधि	औसत वार्षिक जनसंख्या वृद्धि दर (प्रतिशत में)		
	पुरुष	महिला	व्यक्ति
1901–11	0.61	0.52	0.56
1911–21	0.07	0.07	0.03
1921–31	1.06	1.01	1.04
1931–41	1.36	1.36	1.33
1941–51	1.25	1.27	1.25
1951–61	1.99	1.93	1.96
1961–71	2.27	2.15	2.21
1971–81	2.18	2.22	2.20
1981–91	2.17	2.10	2.14

स्रोत : उपरोक्त

सारणी सं. 2
राज्यवार मानव विकास संकेतक
(राज्यों की संकेतकों के आधार पर समृद्धि की वरीयता क्रम)

राज्य	मानव गणना संकेतक			जीवन प्रत्याशा		शिशु मृत्यु	साक्षरता दर	
	योग	ग्रामीण	शहरी	पुरुष	महिला	दर	पुरुष	महिला
पंजाब	16	16	16	13	12	14	8	11
आंध्र प्रदेश	15	15	14	7	5	8	2	5
गुजरात	14	14	15	6	6	10	11	9
केरल	13	11	10	14	13	15	16	16
हरियाणा	12	13	12	11	10	7	9	8
राजस्थान	11	10	11	4	4	4	4	1
हिमाचल प्रदेश	10	12	13	–	–	–	14	14
कर्नाटक	9	7	7	10	7	9	7	7
तमिलनाडु	8	6	6	9	9	12	12	12
महाराष्ट्र	7	5	4	12	11	13	15	13
पश्चिम बंगाल	6	9	8	8	8	11	10	10
आसाम	5	8	9	–	–	5	13	15
उत्तर प्रदेश	4	4	5	2	3	3	03	3
मध्य प्रदेश	3	3	3	1	1	2	5	4
उड़ीसा	2	2	7	3	2	1	6	6
बिहार	1	1	6	5	–	6	1	2

टिप्पणी : उच्च समृद्धि 16 तथा न्यूनतम उपलब्धि 1 के आधार पर

स्रोत : हक, लनजोयू एन्ड रेवेलियन, 1998 तथा आर्थिक सर्वेक्षण 1996–97 (आउटलुक, अक्टूबर, 1998 से उद्धृत)

सारणी सं. 3
देश में जन्मदर, मृत्युदर तथा प्राकृतिक वृद्धि दर

वर्ष	जन्मदर			मृत्यु दर			प्राकृतिक वृद्धि दर		
	ग्रामीण	शहरी	योग	ग्रामीण	शहरी	योग	ग्रामीण	शहरी	योग
1971	38.9	30.1	36.9	16.4	9.7	14.9	22.5	20.4	22.0
1974	35.9	28.4	34.5	15.9	9.2	14.5	20.0	19.2	20.0
1975	36.7	28.5	35.2	17.3	10.2	15.9	19.4	18.3	19.3
1976	35.8	28.4	34.4	16.3	9.5	15.0	19.5	18.9	19.4
1977	34.3	27.8	33.0	16.0	9.4	14.7	18.3	18.4	18.3
1978	34.7	27.8	33.3	15.3	9.4	14.2	19.4	18.4	19.7
1979	34.3	28.3	33.1	14.1	8.1	13.0	20.2	20.2	20.7
1980	34.6	28.1	33.3	13.7	7.9	12.6	20.9	20.2	24.4
1981	35.6	27.0	33.9	13.7	7.8	12.5	21.9	19.2	21.4
1982	35.5	27.6	33.9	13.1	7.4	11.9	22.4	20.2	21.9
1983	35.3	28.3	33.7	13.1	7.9	11.9	22.2	20.4	21.8
1984	35.3	29.4	33.9	13.8	8.6	12.6	21.5	20.4	21.3
1985	35.3	28.1	32.9	13.0	7.8	11.8	21.3	20.3	21.15
1986	34.2	27.1	32.6	12.2	7.6	11.1	22.0	19.5	21.5
1987	33.7	27.4	32.2	12.0	7.4	10.9	21.7	20.0	21.3
1988	33.1	26.3	31.5	12.0	7.7	11.0	21.1	18.6	20.5
1989	32.2	25.2	30.6	11.1	7.2	10.3	21.1	18.0	20.3
1990	31.7	24.7	30.2	10.5	6.8	9.7	21.2	17.9	28.7
1991	30.9	24.3	29.5	10.6	7.1	9.8	20.3	17.2	19.7
1992	30.9	23.1	29.2	10.9	7.0	10.1	20.3	16.1	19.4
1993	30.4	23.7	28.7	10.6	5.8	8.3	19.8	17.4	19.4
1994	30.5	23.1	28.7	10.1	6.7	9.0	20.4	16.4	19.4
1995	30.0	22.7	28.3	9.8	6.6	9.0	20.2	16.1	19.3
1996	29.3	21.6	27.5	9.7	6.5	9.0	19.6	14.9	18.5

स्रोत : रजिस्ट्रार जनरल कार्यालय, भारत सरकार दिल्ली

(सेम्पिल रजिस्ट्रेशन सिस्टम रिपोर्ट पर आधारित)

सारणी सं. 4

राज्यवार देश में जनसंख्या विशिष्टताएं

राज्य	आबादी वितरण (प्रतिशत में)							
	वृद्धि दर (1981–91)	अनुसूचित जाति	अनुसूचित जनजाति	गैर अ.जा. अ.ज.जा.	कुल आबादी प्रतिशत	बेरोजगारी लाइव रजिस्टर पर दर्ज (000)	शिक्षा दर प्रतिशत में 1991	निर्धनता औसत (1993–94)
आंध्र प्रदेश	24.2	15.93	6.31	77.76	55.48	2722.0	44.09	22.19
अरुणाचल	36.83	0.47	63.66	35.87	53.76	8.4	41.59	39.35
आसाम	24.24	7.4	12.83	79.77	49.45	1246.8	52.89	40.86
बिहार	23.54	14.59	7.66	77.78	47.92	3738.0	38.48	54.96
गोवा	16.08	2.08	0.03	97.89	49.56	107.6	75.51	14.92
गुजरात	21.19	7.41	14.92	77.67	53.57	912.0	61.29	24.21
हरियाणा	27.41	19.75	–	80.25	48.51	697.7	55.85	25.05
हिमाचल	20.79	25.34	4.22	70.44	50.64	579.7	63.86	28.44
ज. एवं क.	28.92	–	–	–	–	144.4	–	25.17
कर्नाटक	21.12	16.38	4.26	79.36	54.09	1754.8	56.04	33.16
केरल	14.32	9.92	1.1	88.98	47.58	345.8	89.81	25.43
मध्य प्रदेश	26.84	14.54	23.27	62.19	52.26	2183.8	44.20	42.20
महाराष्ट्र	25.73	11.1	9.27	79.63	52.17	3634.0	64.87	36.86
मणिपुर	29.29	2.02	34.41	63.57	45.27	268.8	59.89	33.78
मेघालय	32.86	0.51	94.75	5.15	50.87	45.7	82.27	25.66
नागालैण्ड	56.08	–	22.21	61.59	46.86	20.7	61.65	37.92
उड़ीसा	20.06	16.2	–	71.69	53.79	206.9	49.09	48.56
पंजाब	20.81	28.31	12.44	70.27	54.22	905.6	58.57	11.77
राजस्थान	28.44	17.29	22.36	71.71	49.30	803.0	38.51	11.77
सिक्किम	28.47	5.93	1.03	79.79	51.26	–	56.94	41.43
तमिलनाडु	15.39	19.18	30.95	52.69	50.39	3490.5	62.66	35.03
त्रिपुरा	34.3	16.36	0.21	78.75	47.55	204.6	60.66	39.01
उ.प्र.	25.48	21.04	5.6	70.78	49.68	2514.5	41.60	40.85
प. बंगाल	24.73	23.62	9.54	90.46	51.40	5383.2	57.70	35.66
दिल्ली	51.45	19.05	–	80.95	54.92	1033.8	75.29	14.69
भारत	23.85	16.73	7.95	75.32	51.61	36742.3	52.21	35.97

स्रोत : दैनिक जागरण 'इण्डिया एट ए ग्लांस' से उद्धृत।

राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना

- 65 वर्ष तथा अधिक आयु के निराश्रितों को 75 रु. मासिक पेंशन
- 53 लाख वृद्धों को लाभ

राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना

- परिवार के प्रमुख कमाऊ सदस्य की प्राकृतिक या दुर्घटनावश मृत्यु की स्थिति में 10,000 रु. की सहायता
- आयु वर्ग 18–64 वर्ष

उनके लिए जिन्हें देखभाल की जरूरत है

राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम

राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना

- गरीब परिवारों की 19 वर्ष से अधिक आयु की महिलाओं को प्रत्येक गर्भावस्था के दौरान 500 रु0 की सहायता
- योजना पहले दो बच्चों के जन्म के लिए ही
- 46 लाख महिलाओं को लाभ

लाभ नकदी/चैक/ मनीआर्डर से

पंचायतों/नगरपालिकाओं की योजना के क्रियान्वयन में प्रमुख भूमिका

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :

पंचायत/नगरपालिका/ खंड विकास अधिकारी/ जिलाधीश

ग्रामीण विकास मंत्रालय

भारत सरकार

davp 98/494

अस्तित्व का प्रश्न हो गया है जनसंख्या नियंत्रण

इरा सिंह

परिवार कल्याण के महत्व को स्त्री–पुरुष साथ–साथ समझते हुए

इस समय हमारा देश सैकड़ों समस्याओं से जूझ रहा है जिनके मूल में है अपार जनसंख्या। एक अरब को पार कर चुकी और निरन्तर बढ़ रही जनसंख्या ने सारी व्यवस्थाओं को चरमरा कर रख दिया है। 1947 में 34.5 करोड़ जनसंख्या होने पर वास्तव में आजादी का जश्न मना सकते थे परन्तु आज 53 वर्ष बाद हम सिर्फ समस्याओं के विकराल घेरे में बंदी नजर आते हैं। वैज्ञानिकों का कहना है 1.5 अरब से ज्यादा जनसंख्या को भारत नहीं पाल सकेगा और न ही बसा सकेगा। 1.6 प्रतिशत की दर से बढ़ रही आबादी को देख कर लगता है यह संकटपूर्ण स्थिति शीघ्र ही आ जाएगी। क्या हम अभी भी नहीं चेतेंगे?

कुछ जनसंख्याविदों का कहना है कि जनसंख्या में वृद्धि, मृत्यु–दर में आई कमी का परिणाम है। तो क्या हम मृत्यु दर के साथ–साथ जन्म–दर में कमी नहीं कर सकते जिससे राष्ट्र का वास्तविक विकास हो सके अन्यथा हमारा सारा विकास और उपलब्धियां बढ़ती आबादी पर बलि चढ़ जाएंगी और हम वहीं के वहीं रह जाएंगे। इस समस्या को और नजरअंदाज किया गया तो संभव है कि हम विकास की दृष्टि से कई वर्ष पीछे लुढ़क जाएं।

बढ़ती आबादी–घटती सुविधाएं

जनसंख्या वृद्धि का ही नतीजा है कि आज बड़ी संख्या गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रही है। अशिक्षा और बेरोजगारी के चलते इन्हीं लोगों का रहन–सहन बहुत निचले स्तर का है। परिवार नियोजन का बोध नहीं होने से परिवार में बच्चों की संख्या बहुत है। उनके पालन–पोषण से गरीब परिवार और गरीब हो जाते हैं जिससे अमीर–गरीब के बीच की खाई बढ़ती ही जा रही है।

शिक्षा भी वर्ग विशेष की धरोहर हो गई है। 50 करोड़ निरक्षर लोगों की शिक्षा के अभाव में समस्या की भयावहता समझना आसान नहीं है। सन्तान को ईश्वरीय वरदान और लड़के को वंश संचालक मानना हमारी मानसिकता का हिस्सा है। ऐसे जिनके पास प्राथमिक सुविधाओं का भी भयंकर अभाव हो उनसे जनसंख्या नियंत्रण पर चिंतन करने की उम्मीद करना भी अतिशयोक्ति सा जान पड़ता है।

ऐसा नहीं है कि आजादी के बाद विकास कार्य नहीं हुए। आखिर चिकित्सा सुविधाओं की वृद्धि का ही नतीजा है कि मृत्यु–दर में कमी आई है पचास साल में औसतन आयु 39 साल से 63 वर्ष हो गई है परन्तु प्रतिदिन 48 हजार बच्चों के जन्म की खुशी यह राष्ट्र नहीं मना सकता। सरकार को उनको चिकित्सा सुविधा और प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराना ही एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।

इसके अतिरिक्त आवास समस्या, प्रदूषण, बेरोजगारी, बिगड़ती यातायात सुविधा, पानी और बिजली में कमी जैसी कई समस्याएं अब खतरे की घंटी दे रही हैं। इन समस्याओं का दुष्परिणाम ही है कि कई सामाजिक समस्याएं और आपराधिक मामले भी बढ़ रहे हैं।

(शेष पृष्ठ 37 पर)

पर्यावरण संरक्षण और रोज़गार की संभावनाएं

डा. आनंद तिवारी

पर्यावरण से जुड़ा हुआ एक अहम् सवाल पर्यावरण संरक्षण बनाम रोजगार है। कतिपय बुद्धिजीवी इस संबंध में अपना यह तर्क रखते हैं कि पर्यावरण संरक्षण नीतियों और कानूनों के क्रियान्वयन ने रोजगार के अवसरों में कमी कर दी है। उनका मानना है कि वृक्षों की कटाई से लोगों को प्राप्त रोजगार छिन गया है। वृक्षारोपण होने से कृषि योग्य भूमि कम हो रही है। इसी प्रकार वन संरक्षण कानून के अंतर्गत वन्य प्राणियों के शिकार पर प्रतिबंध हो जाने से रोजगार छिन गया है आदि। ये तर्क सुनने में भले ही सत्य जान पड़ें परंतु व्यावहारिक धरातल पर यह कहना पूर्णतः गलत होगा कि पर्यावरण संरक्षण से रोजगार के अवसर कम हुए हैं।

वस्तुतः पर्यावरण संरक्षण एक ऐसा पुनीत कार्य है जिसमें बड़ी संख्या में लोगों को रोजगार मिल सकता है चाहे तालाबों को साफ करने क़ा काम हो या जल संरक्षण हेतु नए तालाबों को बनाने का कार्य, चाहे भूमि के कटाव को रोकने हेतु नदियों की सफाई का कार्य हो, चाहे जल की शुद्धता हेतु कुंओं और बावड़ियों की सफाई या गहरा करने का कार्य हो। वन संरक्षण अथवा वृक्षारोपण के कार्य लोगों को रोजगार की स्थायी संभावनाएं पैदा करते हैं। तालाब, जो कि पहले जल संग्रहण के आधार माने जाते थे आज पूर्णतः उपेक्षित हो गए हैं जिसके परिणाम–स्वरूप आज नए तालाबों की खुदाई का कार्य नहीं किया जा रहा है बल्कि पुराने तालाब या तो सूखे पड़े हैं या फिर गंदे कचरे से भरे प्रदूषित पानी के गड्ढे बनकर रह गए हैं। तालाबों की इन स्थितियों से पानी का गहरा संकट पैदा होना शुरू हो गया है। तालाब बारिश के व्यर्थ बहते पानी को संग्रहीत करते हैं। ऐसा पानी लम्बे समय तक भरा रहने के कारण आस–पास के भू–जल के स्तर को ऊंचा बनाए रखने में सहायक होता है। तालाब जीव और जंतुओं के आश्रय स्थल होते हैं। पशुओं तथा जानवरों की प्यास बुझाने में सहायक होते हैं और कुछ सीमा तक सिंचाई संबंधी जरूरतों को पूरा करते हैं। दक्षिण भारत में बांध प्रणाली से पहले सिंचाई हेतु तालाब प्रणाली ही लोकप्रिय थी। तालाबों की महत्ता को नगरीय तथा ग्राम्य व्यवस्था में पुनर्जीवित करना नितांत आवश्यक है। सरकारी स्तर पर इस दिशा में तीन कार्य किए जाने चाहिए, पहला कार्य सूखे तालाबों को वर्ष प्रतिवर्ष गहरा कर जल संग्रहण क्षमता बढ़ाना होगी। तालाब से निकलने वाली उपजाऊ मिट्टी को खेतों में डालकर भूमि की उर्वरता को बढ़ाया जा सकता है। दूसरे, ऐसे तालाब जिनमें कचरा इकट्ठा हो जाता है उनके कचरे को सदैव साफ करना होगा। नगरीय क्षेत्रों में इस दिशा में एक

प्रयास यह भी करना होगा कि तालाबों से जुड़ने वाले सभी निकासी मार्गों को बन्द किया जाए जो गन्दे और प्रदूषित पानी को बहाकर तालाब में लाते हैं और, तीसरा नए तालाबों के निर्माण का निर्माण कार्य ऐसे स्थलों पर करना होगा जहां बारिश में व्यर्थ बहते पानी का संग्रह किया जा सके। इससे बाढ़ को नियंत्रित करने के साथ–साथ मिट्टी के बहाव को रोका जा सकेगा।

ऐसे ही प्रयास झीलों के संबंध में किए जा सकते हैं। तालाब के किनारे वृक्ष लगाए जा सकते हैं और पुष्प वाटिकाएं तथा नर्सरीज तैयार की जा सकती हैं। ये तालाब और झील सौन्दर्य के आधार बन सकते हैं। नौकायन तथा मत्स्य पालन को बढ़ावा देकर रोजगार के नए अवसर पैदा हो सकते हैं। इन सभी कार्यों में स्थानीय लोगों को बड़ी संख्या में रोजगार मिल सकता है। नदियों की सफाई और खुदाई सूखे मौसम में करके बाद में बाढ़ को नियंत्रित किया जा सकता है और मिट्टी के कटाव को रोकने के लिए नदियों के किनारों पर वृक्ष लगाए जा सकते हैं। नदियों की सफाई तथा खुदाई से पानी का संग्रहण बढ़ने के साथ ही जलस्तर भी बढ़ सकता है। कुओं तथा बावड़ियों की सफाई का कार्य व्यापक स्तर पर करना आवश्यक है। नलकूपों की निरंतर बढ़ती संख्या ने जल स्तर को नीचे पहुंचा दिया है जिससे कुएं सूख गए हैं। इनकी सफाई और गहराई तक खुदाई से पानी संरक्षण क्षमता को बढ़ाया जा सकता है इससे ग्रामीण जनता को पीने योग्य ताजा पानी सहज रूप से उपलब्ध हो सकेगा। तालाब, कुओं तथा बावड़ी के पास बंजर और परती भूमि में वृक्ष खेती की जा सकती है इस कार्य को करने के लिए स्थानीय लोगों को रोजगार पर रखा जा सकता है। पठारी और ढलानी क्षेत्रों में वर्षा के बहते पानी का संग्रहण कर सिंचाई हेतु इस्तेमाल करने के लिए छोटे–छोटे बांध अस्थायी तौर पर स्टाप तथा चैक डेमों के रूप में बनाए जा सकते हैं।

वृक्षारोपण के कार्य को रोजगार का स्थायी साधन बनाना होगा। आज इस कार्य को मिशन के रूप में किए जाने की जरूरत है। वृक्ष बादलों को आकर्षित कर वर्षा लाने, वर्षा के पानी का वाष्पीकरण कर पुनः बादल बनाकर वापस भेजने और कुछ पानी को अपनी जड़ों में खींचकर पृथ्वी के गर्भ में रखने का कार्य करते हैं। वृक्षों की महत्ता स्वयं सिद्ध है इसे शब्दों द्वारा बयान नहीं किया जा सकता है। वृक्ष खेती सकल प्रजाति के वृक्षारोपण का प्रयोग यूकेलिप्टस जैसे पानी सोखने वाले वृक्षों की बजाय मिश्रित वृक्ष के रूप में की जाए। मिश्रित वृक्षों में कीटों तथा बीमारियों के लगने की आशंका कम होती है। इन मिश्रित वृक्षों में फलदार वृक्षों को रोपित किया जा सकता है। बंजर और पठारी भू क्षेत्रों में कंटीले वृक्षों को लगाया जा सकता है। बारिस से पूर्व पहाड़ी भागों में नालियां बनाकर ये वृक्ष लगाए जा सकते हैं। बांस की खेती को बढ़ावा देना चाहिए। यह चूंकि कच्चा माल उपलब्ध कराता है इसीलिए रोजगार का स्थायी साधन हो सकता है।

सरकार द्वारा पर्यावरण संरक्षण को रोजगार से जोड़ने के जो उपक्रम किए गए हैं उनमें सामाजिक वानिकी, स्टाप तथा चैक डेम बनाने का कार्य तथा नर्सरीज की स्थापना विशेष रूप से प्रशंसनीय कदम है। किंतु अब वृक्षारोपण जैसे कार्य को परंपरागत तरीके से करने की बजाय ठोस तकनीकी रूप में किया जाए। वृक्ष लगाकर उनमें नियमित खाद, पानी की व्यवस्था आठ–दस वर्ष तक की जाए। जाने–माने पर्यावरणविद् श्री सुंदरलाल बहुगुणा ने अपनी पुस्तक 'धरती की पुकार' में पर्यावरण संरक्षण को रोजगार से जोड़ने की महत्ता को सिद्ध करते हुए कहा है कि "भारत में भूमि उपयोग की ऐसी योजना बने जिसका पहला उद्देश्य मिट्टी और जल संरक्षण के साथ लोगों को स्वतः रोजगार देना हो।" प्रश्न योजना बनाने तथा उसे विधिवत क्रियान्वयन का है।❑

(पृष्ठ 35 का शेष) **अस्तित्व का प्रश्न हो गया है.....**

जनसंख्या नियंत्रण के मुद्दे को राजनैतिक समस्या से ऊपर उठकर देखने की आवश्यकता है। नारी जाति हमारी आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करती है। महिला शिक्षा में कमी के बावजूद परिवार और राष्ट्र के विकास–पथ पर महिलाओं की भागीदारी को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। अब वक्त है परिवार नियोजन में नारी की भूमिका का मूल्यांकन करके इस कार्यक्रम में उसकी ठोस भूमिका का निर्धारण करने का। मीडिया में परिवार नियोजन के साधनों का प्रचार–प्रसार तो हो रहा है परन्तु गांवों और अशिक्षित वर्गों में महिला द्वारा परिवार नियोजन के साधनों को खरीद कर उसके इस्तेमाल की उपयोगिता समझना मुश्किल है। हमारा दुर्भाग्य ही रहा है कि यौन शिक्षा और समझ को हमने हमेशा महिलाओं से दूर ही रखा परन्तु जनसंख्या नियंत्रण का सवाल पुरुष तथा महिला की आपसी समझ पर ही टिका है। यही हमारे जीवन का प्रश्न बन गया है। शिक्षा का इंतजार न करके हमें जनसंख्या और परिवार नियोजन की शिक्षा को प्राथमिकता देनी ही होगी। इसमें स्त्री पुरुष दोनों को ही सम्मिलित करना आवश्यक है जिससे परस्पर आपसी समझ का विस्तार हो सके।

राष्ट्रीय जनसंख्या नीति

केन्द्र सरकार द्वारा घोषित राष्ट्रीय जनसंख्या नीति वास्तव में सराहनीय कदम है। सरकार द्वारा राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग के गठन, गरीब व छोटे परिवारों के लिए स्वास्थ्य बीमा लागू करना, दो बच्चों के मानदण्ड को जारी रखना आदि महत्वपूर्ण प्रावधान इस नीति में हैं। सरकारी नीति में सन् 2045 तक आबादी स्थिरीकरण का लक्ष्य रखा गया है। आबादी में वृद्धि को गंभीरता से लिया जा रहा है, यह अच्छी बात है। पर देखना यह है कि सरकार इस नीति को कितनी सफलता के साथ लागू कर पाती है और इसमें समाज का कितना सहयोग ले पाती है।

समाज को चिंतित होना होगा

सरकार के साथ–साथ समाज को भी अपना उत्तरदायित्व समझना होगा। समाज को बढ़ती आबादी से काफी नुकसान उठाना पड़ता है। इससे सामाजिक विकास में भी बाधाएं पड़ती हैं। तो क्या हमारा कोई उत्तरदायित्व नहीं है? बिना सामाजिक सहयोग के सरकार कुछ भी नहीं कर सकती। समाज यानी प्रत्येक व्यक्ति की भागीदारी से ही जनसंख्या नियंत्रण की समस्या के समाधान में अपेक्षित परिणाम मिल सकेंगे। ❑

खुम्ब की खेती : ग्रामीण रोजगार का साधन

जग नारायण*

खुम्ब या मशरुम कवक वर्ग की एक वनस्पति है। भारत में आदि काल से ही पौष्टिक पदार्थ के रूप में इसका प्रयोग होता रहा है। आज जबकि देश की आबादी एक अरब के निकट पहुंच चुकी है, और जिस तेज गति से उसका बढ़ना जारी है, उसके अनुसार सन् 2025 तक वह 133 करोड़ और 2050 तक 158 करोड़ तक पहुंच जाएगी।

द्रुत गति से बढ़ती आबादी के लिए भोजन जुटाने में लगे देश के कृषि वैज्ञानिक अनाज का उत्पादन बढ़ाने में अनवरत प्रयासरत हैं। इस दिशा में उन्हें आशातीत सफलता भी मिल रही है। इसी क्रम में भारतीय वैज्ञानिक बढ़ती आबादी को पोषक तत्व मुहैया कराने में भी लगे हैं। खुम्ब (मशरुम) उनकी इस समस्या का एक आशाप्रद विकल्प है।

खुम्ब में पाये जाने वाले पोषक तत्व

ताजे खुम्ब में प्रोटीन 3.7 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 2.4 प्रतिशत, वसा 0.4 प्रतिशत, पोषक तत्व 0.6 प्रतिशत तथा जल 89 से 91 प्रतिशत तक पाया जाता है। इसमें विटामिन 'बी.', 'सी.' 'डी', एवं 'के.' तथा कैल्शियम, फास्फोरस, पोटैशियम और लौह तत्व की प्रचुरता होती है। खुम्ब से 24.4 से 34.4 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है। संक्षेप में 100–200 ग्राम निर्जल खुम्ब में एक साधारण व्यक्ति के लिए सभी जरूरी तत्व उपलब्ध रहते हैं। इस प्रकार खुम्ब प्रोटीन, विटामिन और अन्य पोषक तत्वों का आदर्श स्रोत है। प्रोटीन तथा एमिनो एसिड की उपलब्धता के कारण खुम्ब का पोषक मूल्य सब्जियों से अधिक तथा मांस और दूध के बराबर आंका गया है।

प्रयोगशाला से बाहर उगी खुम्ब की एक प्रजाति

खुम्ब की उपयोगी प्रजातियां

साधारणतया खुम्ब की लगभग 2000 प्रजातियां पाई जाती हैं। इनमें खाने योग्य 80 तथा व्यावसायिक उत्पादन के लायक मात्र 40 ही होती हैं। भारत में प्रमुख रूप से जो पांच या छः प्रजातियां उगाई जाती हैं, वे हैं – एगेरिकश (बटन मशरुम), प्यूरोट्स (आयस्टर या डिगरी मशरुम), वाल्वेरिला (पेट्री–स्ट्रा मशरुम), आरिकुलेरिया (वुडइयर मशरुम), लेण्डिनस (ओक मशरुम), फ्लेमुलिना (विन्टर मशरुम) तथा स्ट्रेनेला (सिल्वर इयर मशरुम)।

एगेरिकश (बटन खुम्ब) अपने विशिष्ट गुणों के कारण यह सर्वाधिक लोकप्रिय है। सम्पूर्ण विश्व के कुल खुम्ब उत्पादन में इसका हिस्सा 37 प्रतिशत है। इसके लिए कम तापक्रम (15 से 18 से.ग्रे.) की आवश्यकता होती है। इसके लिए विशेष रूप से पर्वतीय क्षेत्र उपयुक्त है। अन्य खुम्बों की तुलना में एगेरिकश या बटन खुम्ब की उत्पादन विधि अधिक समय

* स्वतंत्र पत्रकार

साध्य और खर्चीली है। इसके उत्पादन के लिए तकनीकी कुशलता की भी आवश्यकता होती है।

प्यूरोट्स खुम्ब (ओयस्टर मशरुम) : एगेरिकश (बटन खुम्ब) की तुलना में गर्म (25 से 35 से.ग्रे.) और आद्र मौसम प्यूरोट्स खुम्ब के उत्पादन के लिए सर्वथा उपयुक्त होता है। यह भारत सहित एशिया के अन्य देशों में लोकप्रिय है। बटन खुम्ब की तुलना में इसका उत्पादन आसान और कम खर्च वाला है। भूसा, पुआल, गन्ने की खोई, केले के सूखे पत्ते तथा रद्दी कागज जैसे सैलूलोज युक्त कृषि अवशिष्टों पर इस खुम्ब को आसानी से उगाया जा सकता है।

खुम्ब का आर्थिक और व्यावसायिक पक्ष : एक अनुमान के अनुसार भारत में खुम्ब की खेती के उपयोग में आने लायक 27 करोड़ 33 लाख टन कृषि अवशिष्ट प्रति वर्ष प्राप्त होता है जो 92 लाख टन खुम्ब उत्पादन के लिए पर्याप्त है। अवशिष्टों पर आधारित होने के कारण इसका उत्पादन मूल्य अत्यन्त अल्प आता है। इसके अलावा उत्पाद के बाद बचे कम्पोष्ट को खेतों में खाद के रूप में भी प्रयोग में लाया जाता है।

भारत में लगातार मांग की बढ़ोतरी के कारण खुम्ब उत्पादन व्यवसाय उत्तरोत्तर प्रगति कर रहा है। 1969–70 में जहां इसका उत्पादन मात्र 100 टन था, वहीं 1995–96 में 35,000 टन पहुंच गया। संयुक्त राज्य अमरीका, जर्मनी, फ्रांस और अन्य यूरोपीय देश भारतीय मशरुम के प्रमुख आयातकर्ता हैं। 1995–96 में 50 करोड़ रुपये मूल्य का खुम्ब विदेशों को निर्यात किया गया।

संतुलित पोषाहार के अलावा कम स्टार्च होने के कारण खुम्ब हृदय और डाइबिटीज के रोगियों के लिए समान रूप से उपयोगी हैं। संवर्धन के बाद खुम्ब को नूडल्स, चिप्स, बिस्कुट तथा केक आदि के रूप में उपयोग किया जा सकता है। ताजे रूप में सुखाकर, प्रसंस्कृत कर डिब्बों में पैकिंग के बाद इसे विदेशों को निर्यात किया जाता है।

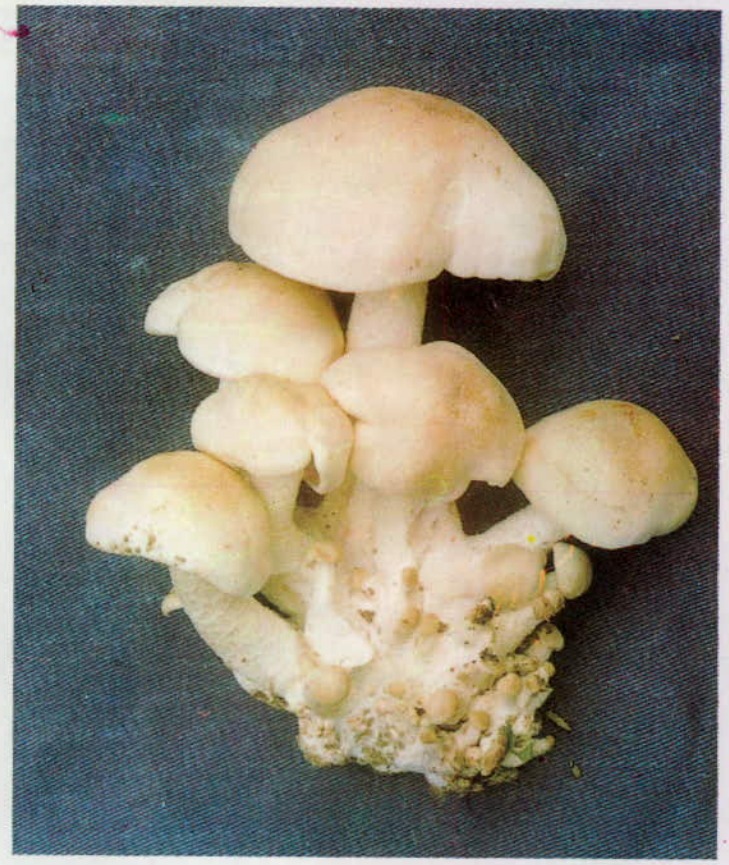

पौष्टिक गुणों से भरपूर खुम्ब की एक प्रजाति

रोजगार का साधन : खुम्ब उत्पादन शिक्षित–अशिक्षित सभी लोगों के लिए स्वरोजगार का एक प्रबल साधन बन सकता है। कृषि अवशिष्टों पर आधारित यह उद्योग अन्य कृषि उत्पादनों की तुलना में कम लागत वाला है। इसकी विशेषताओं और उपयोगिताओं को ध्यान में रखकर भारत सरकार ने इसके विकास के लिए अनेक उपाय किए हैं। केन्द्रीय कृषि मंत्रालय ने आठवीं पंचवर्षीय योजना में खुम्ब उत्पादन बढ़ाने के लिए एक करोड़ रुपये की व्यवस्था की थी। देश के अनेक केन्द्रों पर खुम्ब की खेती में वृद्धि के लिए व्यापक कार्य हो रहा है, जिनमें प्रमुख हैं – काशी हिन्दू विश्वविद्यालय स्थित जैव प्रौद्योगिकी स्कूल तथा दिल्ली स्थित राष्ट्रीय मशरुम प्रशिक्षण एवं अनुसंधान केन्द्र।

खुम्ब की खेती जहां ग्रामीणों के लिए पूरक रोजगार का साधन बन सकती है, वहीं बेरोजगार तथा भूमिहीन ग्रामीणों को रोजगार प्रदान करने में भी सक्षम है। इसके लिए हमारे देश के कई बैंकों द्वारा मदद भी दी जा रही है, जिनमें प्रमुख हैं – भारतीय स्टेट बैंक की कृषि विकास शाखा, सेन्ट्रल बैंक की कृषि विकास शाखा तथा पंजाब नेशनल बैंक। ये बैंक परियोजना के अनुसार खुम्ब उत्पादन के लिए कम तथा लम्बे समय के ऋण प्रदान करते हैं।

बेरोजगार युवाओं के लिए भी खुम्ब की खेती रोजगार का अच्छा साधन है। प्रशिक्षण लेकर थोड़ी जगह में खुम्ब गृह बनाकर खुम्ब की खेती कर वे अपनी बेरोजगारी दूर कर सकते हैं। ❑

लेखकों से

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, कविता, लघुकथा आदि भेजिए। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो और उसके साथ मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। रचनाएं संपादक, 'कुरुक्षेत्र', ग्रामीण विकास मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली–110001 के पते पर भेजें।

– सम्पादक

श्रमदान से पुराने तालाबों का जीर्णोद्धार हुआ

जगदीश मालवीय

मध्य प्रदेश में भू–जल संरक्षण और संवर्धन के लिए जिला प्रशासन नीमच द्वारा जिले के पुराने तालाबों के जीर्णोद्धार के लिए एक कामयाब अभियान शुरू किया गया है। इस अभियान के काफी उत्साहजनक परिणाम मिले हैं। प्रशासन द्वारा जनभागीदारी से प्रारम्भ की गई इस मुहिम के तहत नीमच तहसील के लेवड़ा तालाब, भड़भड़िया तालाब, जावद तहसील के फूलपुरा तालाब, जनकपुर तालाब, मनासा तहसील के मनासा, रामपुरा और ग्राम बनी तालाब का सामूहिक श्रमदान से जीर्णोद्धार किया जा चुका है। इस अभियान से प्रेरित होकर जिले के अन्य गांवों के लोग भी स्वयं आगे आकर अपने गांव के तालाबों का कायाकल्प करने में जुटने लगे हैं।

जिला सरकार द्वारा लिए गए निर्णयानुसार प्रशासन की पहल पर नीमच जिले में सम्बंधित क्षेत्रों के लोगों द्वारा सामूहिक श्रमदान से किए गए इन तालाबों की मरम्मत और गहरीकरण के कार्य से ग्राम पंचायतों को मिट्टी की रायल्टी के रूप में अच्छी आय प्राप्त हुई है वहीं तालाबों के काफी गहरा हो जाने से उनकी जल संग्रहण क्षमता में भी वृद्धि हुई है। इससे क्षेत्र के भूजल स्तर में भी बढ़ोतरी हुई है।

नीमच और मन्दसौर जिले में गिरते भू–जल स्तर पर चिन्ता करते हुए जिला सरकार की प्रथम एवं द्वितीय बैठक में भू–जल संरक्षण पर चर्चा के लिए विशेषज्ञों को आमंत्रित करने का निर्णय लिया गया था तथा प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री दिग्विजयसिंह के मुख्य आतिथ्य एवं पद्मभूषण श्री अन्ना हजारे की विशेष उपस्थिति में मन्दसौर में आयोजित "मालवा जल सम्मेलन" में भी देश के भू–जल विशेषज्ञों द्वारा भू–जल स्तर में वृद्धि के लिए जनभागीदारी से पुराने तालाबों के जीर्णोद्धार सहित अन्य सार्थक प्रयास करने पर बल दिया गया था।

जिला सरकार के निर्णय पर जिला प्रशासन नीमच द्वारा जनसहयोग से पुराने तालाबों के जीर्णोद्धार की मुहिम प्रारम्भ की गई। नीमच के समीपस्थ "लेवड़ा तालाव" से जिला कलक्टर श्री प्रभात पाराशर द्वारा केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल के अधिकारियों से चर्चा कर बल के जवानों के सहयोग से 1.20 वर्ग किलो मीटर जल संग्रहण क्षमता के 570 मीटर लम्बे, 5.50 मीटर ऊंचे इस जलाशय की क्षतिग्रस्त पाल की मरम्मत की गई,वहीं बल के करीब 80 जवानों ने प्रतिदिन एक माह तक श्रमदान कर इस तालाब के गहरीकरण के कार्य को पूरा किया। बल के जवानों की मेहनत रंग लाई और आज लेवड़ा जलाशय पानी से भरा है।

श्रमदान से लेवड़ा जलाशय के जीर्णोद्धार से प्रेरित होकर तथा प्रदेश के सामान्य प्रशासन राज्यमंत्री श्री घनश्याम पाटीदार की पहल पर जावद तहसील के दड़ाली, पानोली, लक्ष्मीपुरा और फूलपुरा के ग्रामीण भी अपने क्षेत्र के 'फूल तालाब' के जीर्णोद्धार में जुट गए। क्षेत्र के किसानों ने अपने अपने ट्रेक्टर ट्राली से तालाब की मिट्टी निकालकर अपने खेत में डालने का कार्य शुरू किया। करीब 15 दिन चले इस कार्य में 5 हजार से भी अधिक ट्रेक्टर ट्राली मिट्टी इस तालाब से निकाली गई। इससे ग्राम पंचायत दड़ोली को 20 रुपये प्रति ट्राली के मान से करीब एक लाख रुपये की आय भी प्राप्त हुई। साथ ही 0.3 वर्ग मील क्षेत्र में फैले चौदह बीघा जलग्रहण क्षेत्र का फूल तालाब काफी गहरा हो गया।

जिले में पुराने तालाबों के जीर्णोद्धार के इस कामयाब अभियान में जिले के अन्य गांवों के लोगों ने भी उत्साहपूर्वक भाग लिया। ❑

तरावटी गुणों से भरपूर ग्रीष्म ऋतु का टानिक है खरबूजा

ललन कुमार प्रसाद

गर्मियों के महत्वपूर्ण फलों में खरबूजा अपना विशिष्ट स्थान रखता है। यह लू और गर्मी से बचाता है। दिल–दिमाग को ताकत देता है और तरो–ताजा रखता है। यह मधुर, शीतल और बलवर्धक होता है। इसलिए इसे गर्मी के मौसम का टानिक कहा जाता है। यह ग्रीष्म ऋतु का सर्वसुलभ और सस्ता फल है। ऐसा इसलिए कि हमारे देश में खरबूजे की पैदावार बहुत होती है और ग्रीष्म ऋतु में इसकी बहुतायत से मंडियां भर जाती हैं। इसके पके फल मार्च–अप्रैल में मंडियों में मिलने शुरू हो जाते हैं।

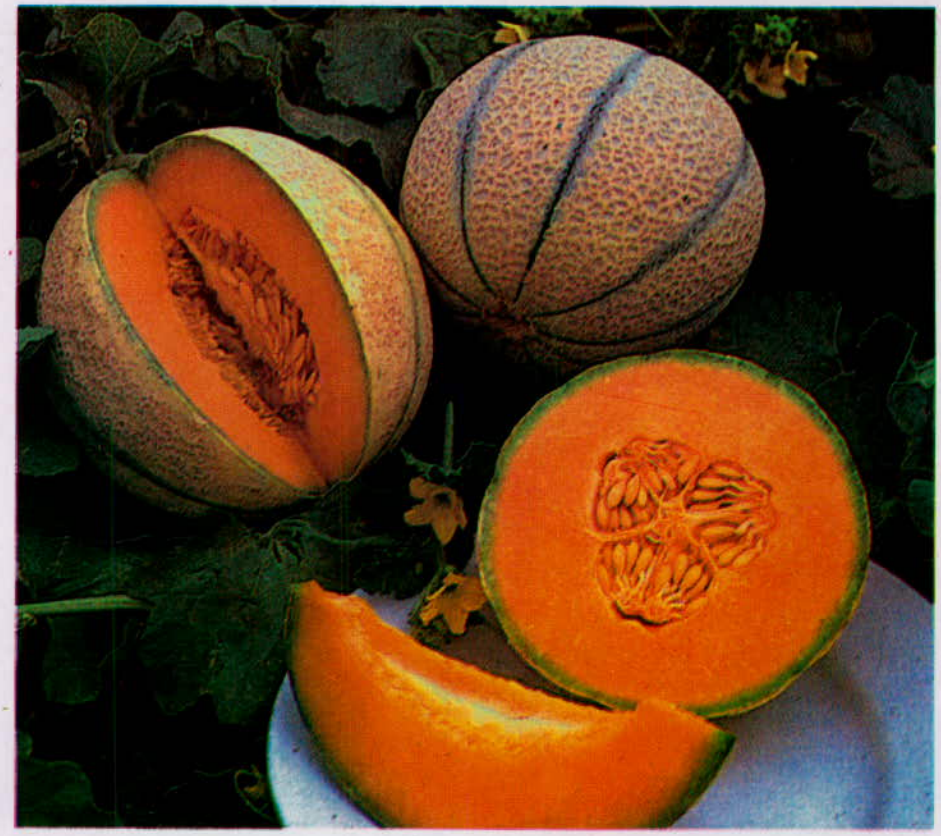

क्या है खरबूजा?

यह कुकुर्विटेसी कुल के एक पौधे का फल हैं जिसका वानस्पतिक नाम कुकुमिस मेलो है। इसे हिन्दी में खरबूजा, संस्कृत में खरबूज, महाफल और सडभुजा, बंगला में खरभुज और खरबुज, पंजाबी में खरबूजा, मलयालम में खरबूज, तेलगू में खरबुज, मराठी में खर्बज तथा गुजराती में खरबुज, तलीया और चीमड़ा कहते हैं। राजस्थान में इसे खरबुजो कहकर पुकारा जाता है। इसे फारसी में "खरपुजह" और अरबी में "वित्तिख" कहते हैं। अंग्रेजी में इसे "मस्क मेलोन" कहा जाता है।

कच्चा खरबूजा हरा होता है, परन्तु पकने पर पीला हो जाता है। खरबूजे पर सफेद रंग की खड़ी–खड़ी आठ–दस धारियां होती हैं। फल के मध्य में जाली और जाली में सफेद रंग के नन्हें–नन्हें ढेर सारे बीज होते हैं जो "मगद खरबूजा" के नाम से प्रसिद्ध है। ये नन्हें बीज एक दूसरे से सटे रहते हैं और इन बीजों के इर्द–गिर्द कुछ चिपचिपा तरल पदार्थ लगा रहता है। पके खरबूजे से भीनी–भीनी खुशबू आती है जो बड़ी रुचिकर लगती है। अधिक पकने पर फल फट जाता है। यह 250 ग्राम से लेकर तीन–चार किलो वजन तक का होता है।

* स्वतंत्र पत्रकार

खरबूजे के पोषक तत्व

रासायनिक विश्लेषण से पता चला है कि पके खरबूजे के गूदे में जल 92.8 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 5.9 प्रतिशत, प्रोटीन 0.6 प्रतिशत, वसा 0.1 प्रतिशत, और खनिज लवण 0.6 प्रतिशत होता है। इसके प्रति 100 ग्राम गूदे में कैल्शियम 15 मिलीग्राम, फास्फोरस 10 मिलीग्राम और लौह 2 मिलीग्राम होता है। इसके प्रति 100 ग्राम में कैरोटीन यानी प्रो विटामिन ए (जो आतों में पहुंचकर रेनिटाल यानी असली विटामिन ए में परिवर्तित हो जाता है), 0.27 मिलीग्राम थायमिन (विटामिन बी,), 0.11 मिलीग्राम, नियासिन (निकोटिनिक एसिड या विटामिन बी 5) 0.5 मिलीग्राम और

स्कार्बिक एसिड (विटामिन सी) 32 मिलीग्राम होता है। इसके प्रति 100 ग्राम से 25 कैलोरी ऊर्जा मिलती है।

खरबूजे के बीज के पोषक तत्व

रासायनिक विश्लेषण से पता चला है कि खरबूजे के बीज में जल 6.4 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 8.7 प्रतिशत, प्रोटीन 30.6 प्रतिशत, वसा 50.1 प्रतिशत और खनिज लवण 4.2 प्रतिशत होता है। इसमें फास्फोरस की प्रचुरता होती है। इसके प्रति 100 ग्राम में कैल्शियम 660 मिलीग्राम, लौह 17.3 मिलीग्राम और नियासिन (विटामिन बी 5) 1.6 मिलीग्राम होता है। इसके प्रति 100 ग्राम से 607 कैलोरी ऊर्जा मिलती है।

खरबूज़े के औषधीय गुण

आयुर्वेद के अनुसार खरबूजा बलवर्द्धक, वीर्यवर्द्धक, पेट के अन्दरूनी हिस्से को शुद्ध करने वाला, उदर विकार को दूर करने वाला, पेशाब खुलकर लाने वाला, पसीना लाने वाला, शीतल, तृप्तिकारक, उन्माद को नाश करने वाला, दूध पिलाने वाली माताओं के दूध को बढ़ाने वाला स्वादिष्ट फल है। इसके बीज का सेवन भी तन्दुरुस्ती के लिए बहुत अच्छा है।

ग्रीष्म ऋतु का अमृतफल

यह प्यास को शान्त करता है, तेज धूप और गर्मी में इसकी शीतलता अतिशय शान्ति प्रदान करती है। फिर पके खरबूजे में मौजूद शक्कर पूर्वपाचित होने के कारण यह शरीर को तुरन्त पोषण प्रदान करता है। इसलिए गर्मी के दिनों में इसका सेवन गर्मी और लू के आतप से शरीर को सुरक्षित रखता है तथा मस्तिष्क और मन को ताजगी प्रदान करता है। गर्मियों में इसके सेवन से थकान मिट जाती है और आलस्य नहीं आता।

गर्मियों में बार–बार लगने वाली प्यास से जब लोग बेचैन हो उठते हैं और पानी पीने से उनकी प्यास शान्त नहीं होती है तो पके खरबूजे को काटकर खाने से प्यास का शमन हो जाता है।

लू लगने पर पके खरबूजे के बीज को पीसकर सिर पर लेप करने से तथा पके खरबूजे के रस को शरीर पर मलने से ठण्डक आ जाती है।

उदर रोगों में अति गुणकारी

पके खरबूजे में कोष्ठ (उदर का अन्दरूनी भाग) शुद्ध करने तथा कब्ज दूर करने का गुण होता है। इसलिए पीलिया के रोग में इसका सेवन बहुत लाभकारी है। खासकर संग्रहणी (पतला दस्त आना) और आंव के रोगियों के लिए यह एक अमृत फल है।

खरबूज में क्षारतत्व अधिक होते हैं। अतः इसके सेवन से शरीर की अम्लता दूर हो जाती है और इसलिए बहुत से रोग ठीक हो जाते हैं।

त्वचा रोगों में बहुत लाभकारी

कब्ज दूर कर पेट की सफाई करने के साथ–साथ पका खरबूजा पेशाब खुलकर लाता है तथा इसमें पसीना लाने का गुण भी है। इसलिए पका खरबूजा खाने से शरीर में एकत्रित मलदोष शरीर से बाहर निकलने लगता है। फिर खरबूजा रक्त के विकारों को दूर करता है। फलस्वरूप रक्त की शुद्धि होने लगती है। इसलिए पके खरबूजे के सेवन से त्वचा के हर रोग में लाभ पहुंचता है। सफेद वर्ण का पका खरबूजा खाने से एक्जिमा दूर हो जाता है।

खरबूजे के छिलके को पीसकर चेहरे पर लगाने से दाग और झुर्रियां दूर हो जाती हैं। खरबूजे के बीज को पीसकर इसकी लुगदी (पेस्ट) तैयार कर लें। इस लुगदी को लगाने से चेहरा निखर आता है, तथा कील–मुहांसे दूर हो जाते हैं।

पथरी की शिकायत में गुणकारी

खरबूजे का बीज खुलकर पेशाब लाने वाला होता है। यह गुर्दे के अवरोध को दूर करता है। बात यह है कि खरबूजे के बीज में यूरिक एसिड और पथरी को गलाने का गुण होता है जो पथरी को गलाकर और तोड़कर बाहर निकलता है। इसलिए कुछ दिनों तक इसके नियमित सेवन से पथरी के चलते गुर्दे में उत्पन्न अवरोध दूर हो जाता है और गुर्दे की सूजन मिट जाती है।

पका खरबूजा पेशाब खुलकर लाता है और इसमें पसीना लाने का गुण भी है। इसलिए इसका सेवन जलोदर में लाभकारी है। इस रोग में पेट के भीतरी भाग में पानी भर जाने से वह फूल जाती है।

खरबूजे के छिलके में पोटाश लवण की प्रचुरता होती है। अतः इसका सूप बनाकर पीने से मूत्रल प्रभाव पड़ता है। इसके सूप में नारियल का पानी मिलाकर सेवन करने से इसका मूत्रल गुण और अधिक असरदार हो जाता है। फलस्वरूप साधारण नमक के चलते पेट के भीतरी भाग में रुका हुआ जल, जिसके कारण पेट फूल जाता है, तेजी से निकलने लगता है।

नारियल का पानी मिला खरबूजे का सूप मूत्राशय की पथरी को तोड़कर बाहर निकाल देता है

स्मरणशक्ति वर्द्धक

पांच ग्राम खरबूजे के बीज को पानी के साथ पीसकर उसमें मिश्री मिलाएं और नियमित रूप से दूध के साथ इसका सेवन करें। इससे स्मरण–शक्ति में वृद्धि होती है। ऐसा इसमें मौजूद फास्फोरस की प्रचुरता के कारण होता है। खरबूजे के बीज का हलवा खाने से भी स्मरण–शक्ति में वृद्धि होती है, लेकिन इसका सेवन अधिक मात्रा में नहीं करना चाहिए।

चक्कर आने से छुटकारा

दो–चार ग्राम खरबूजे के सूखे बीज को देसी घी में भूनकर सुबह–शाम सेवन करने से चक्कर आने बन्द हो जाते हैं। साथ ही तन्द्रा और आलस्य की शिकायत भी दूर हो जाती है।

हकलाहट में लाभकारी

हकलाने वाले व्यक्ति यदि खरबूजे के मौसम में इसे थोड़ी–थोड़ी मात्रा में नियमित खाएं तो उनकी हकलाहट दूर हो सकती है अथवा उसमें उल्लेखनीय सुधार हो सकता है।

दूध पिलाने वाली माताओं के लिए वरदान

शिशु पैदा होने के बाद मां को पर्याप्त मात्रा

(शेष पृष्ठ 44 पर)

चतुर्भुज*

प्रेरणा का प्रकाश स्तम्भ

एक विशेष सम्वाददाता द्वारा

"थैंक यू" – शहरी आदत के कारण पानी पी चुकने पर अनायास ही मुंह से निकल पड़ा।

"नो मेन्शन प्लीज", उत्तर में पानी पिलाने वाले किसान युवक के मुंह से भी कदाचित् अनायास ही ये शब्द निकल पड़े। पर उन शब्दों ने मेरे मस्तिष्क में एक झटका–सा दिया और मैं एकटक उस युवक के चेहरे की ओर स्तम्भित–सा देखता रह गया। उसकी धूलधूसरित वेशभूषा और उसे हाल ही खलिहान में काम करते देख कर भी मुझे उसके किसान होने में जैसे विश्वास नहीं हुआ। मैंने पूछा – "तुम खेती करते हो?"

"हां, मै पिछले दो साल से इसी खेत पर काम कर रहा हूं। इसको यह स्वरूप देने का मुझे गर्व है।" युवक की आंखों में आत्म गौरव की चमक थी।

संसार की खारे पानी की सबसे बड़ी झीलों में प्रसिद्ध सांभर झील से कोई दो मील दूर तेयद गांव के किनारे एक ऊबड़–खाबड़ खेत है। 15 बीघे के इस खेत की जमीन के तल में कोई 20 फुट का अन्तर था। खेत का एक किनारा टीलों से ढका था जिससे बीच में एक प्राकृतिक झील–सी बन रही थी। राजस्थान के इस प्रदेश में इस प्रकार के खेत होना कोई आश्चर्यजनक नहीं था। इधर रेतीले प्रदेश में प्रायः ऐसी जमीनें मिलती हैं जिन्हें सामान्यतः बरसाती बंजर कहा जाता है जिनमें बरसात में कभी कुछ बाजरा और मोठ–मूंग हो गया तो ठीक, नहीं तो सिंचाई के साधन भी इस ऊंची–नीची जमीन को उपजाऊ बनाने में प्रायः असमर्थ रहते हैं और आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद न होने के कारण लोग इसे जोतने के बजाय किसी दूसरे के खेत पर मजदूरी करना अच्छा समझते हैं।

लेकिन इस खेत पर चार–पांच किसान खलिहान में गेंहू और जौ की खासी अच्छी फसल काट कर बरसा रहे थे जिनमें से एक अंग्रेजी में उत्तर देने वाला युवक भी था।

मोटे खद्दर का कुरता और माथे पर तौलिया लपेटे मध्यम कद और गेहुंए रंग के उस युवक को दो क्षण तक ऊपर से नीचे तक देखकर और उसके मुंह से "नो मेन्शन प्लीज" सुन कर भी मेरा मन यह नहीं मान रहा था कि यह युवक पढ़ा–लिखा होगा। मेरे इस अविश्वास का मूल कारण आज का वह वातावरण था जिसमें प्रत्येक पढ़ा–लिखा युवक शहरों की ओर नौकरी और रोजगार की तलाश में लपकता है। गांव में पैदा होने पर भी गांव का वातावरण उसे विदेशी लगने लगता है और इसी धारणा ने मुझे उससे फिर यह पूछने को बाध्य कर दिया – "अच्छा तो तुम अंग्रेजी भी पढ़े हो?"

"जी हां, मैंने मैट्रिक पास किया है।"

"क्या तुम्हें शहर में कोई काम नहीं मिला? मैट्रिक पास हो तो कहीं प्राइमरी स्कूल में मास्टर बन जाते?"

पर मुझे लगा इस सुझाव की प्रतिक्रिया युवक चतुर्भुज पर अच्छी नहीं हुई। शहरी नौकरी के प्रति घृणा के भाव उसके गम्भीर व स्थिर नेत्रों में झलक उठे। वह बोला – "मैं उस जिन्दगी का रस भी चख चुका हूं। यूं देखने को तो उसमें काफी आराम है लेकिन ....लेकिन मानसिक शान्ति और परिश्रम का पूरा फल उसमें नहीं मिलता।"

युवक चतुर्भुज भी 1953 में मैट्रिक पास कर अन्य पढ़े–लिखे युवकों की भांति आजीविका के लिए स्वभावतः शहरों की ओर आकर्षित हुआ। भारत के पश्चिमी राज्य राजस्थान से चल कर लगभग दो हजार मील की यात्रा तय कर वह ठेठ पूर्व में असम के किसी नगर में पहुंचा। इधर के लोग प्रायः नौकरी की तलाश में बंगाल और असम राज्यों का ही आश्रय लिया करते हैं। वहां एक साबुन के कारखाने में उसे काम भी मिल गया – सामान्यतया अच्छी तनख्वाह पर। युवक परिश्रमी था और परिश्रम एवं ईमानदारी से कौन मालिक खुश नहीं हो सकता। चतुर्भुज का मालिक भी उससे खुश था। लेकिन तीन महीने तक अथक काम करने के बाद उसे एक रात जीवन का रहस्य खुला कि यदि वह अपने खेत पर इतनी मेहनत और लगन से काम करे तो क्या उसे इतना पैसा नहीं मिल सकता?

और जिस प्रकार सिद्धार्थ एक अंधेरी रात में घर छोड़कर बुद्धत्व की खोज के लिए निकले थे, चतुर्भज जीवन का रहस्य जान कर उल्टे अपने घर की ओर रवाना हो गया। अपने दो भाइयों की मदद से उसने अपनी जमीन को संभाला और आज परिश्रम का पूरा फल प्राप्त कर वह सन्तुष्ट है।

"पर यह जमीन तो".....मेरे अधूरे प्रश्न का पूरा मतलब समझ कर उसने उत्तर दिया – "हां, जमीन यह खराब अवश्य थी। बरसात के बाद तो प्रायः प्रति वर्ष इसमें नाले पड़ जाते थे। जमीन जगह–जगह से कट जाती थी और जब हमने इस पर काम शुरू किया तो गांव वालों ने हमारा उपहास भी किया था। पर यह सब मेंड़बन्दी का परिणाम है" – उसने तीन बीघे के एक टुकड़े में सब्जियों की क्यारियों की ओर इशारा करते हुए गरिमा भरी नजरों से मेरी ओर देखा।

चतुर्भज वगैरह पांच भाई हैं और पांचों मिल कर उसी खेत पर काम करते हैं। अब कुएं पर उन्होंने रहट भी लगा लिया है। जिससे उनकी मेहनत तो बची ही, उसके अतिरिक्त सौ रुपये महीने की बचत उनको और हो गई है। उस बचे हुए श्रम से वे और दूसरी फसलें पैदा करते हैं। पढ़ा–लिखा होने के कारण चतुर्भुज खेती के नए और उन्नत तरीकों को शीघ्र अपना लेता है और उसके खेत की पैदावार देख कर गांववाले भी उसका अनुसरण करते हैं। मेड़बन्दी का यह प्रयोग चतुर्भुज के खेत से उठ कर जोबनेर पंचायत

* कुरुक्षेत्र के जुलाई 1960 अंक से उद्धृत

समिति के गांव–गांव और खेत–खेत में जा पहुंचा और इसी के परिणामस्वरूप समिति ने शीर्ष स्थान प्राप्त किया और राज्यपाल की शील्ड प्राप्त की।

तेयद गांव में आज इसी कारण कहीं खाद की रूड़ी दिखाई नहीं देती। सारा खाद गढ्ढों में बनता है। मेंड़बन्दी केवल नारा नहीं, गांव के किसानों का नियमित कर्तव्य बन गया है और किसी समय कठिनाई से एक फसल पैदा करने वाले तेयद गांव के किसान अपने श्रम से तीन–तीन फसलें पैदा कर रहे हैं। आज तेयद गांव में कई मैट्रिक पास अंग्रेजी पढ़े–लिखे युवक खेती करते मिलेंगे। नगरों में जा कर नौकरी करने का मोह अब दूर हो गया है। और युवक के मानस पर से मोह के इस अन्धकार की परत हटाने में चतुर्भुज के जीवन ने प्रकाशस्तम्भ का काम किया है। ❑

(पृष्ठ 42 का शेष) **तरावटी गुणों से भरपूर.....**

में पका खरबूजा खिलाया जाए तो उनके स्तनों में दूध की मात्रा में काफी वृद्धि हो जाती है। इतना ही नहीं, यह दूध स्तनपान करने वाले शिशुओं के लिए बहुत फायदेमन्द होता है।

खरबूजे के अन्य औषधीय उपयोग

खरबूजा खाने से आदमी दीर्घजीवी होता है। पके खरबूजे का सेवन यक्ष्मा (टी.वी.) के रोगियों के लिए भी गुणकारी है। खरबूजे के सूखे बीज को सौंफ के साथ खाने पर आवाज में मधुरता आती है। खरबूजे के बीज के सेवन से रक्तचाप और रक्त संचार सम्बन्धी रोगों से जड़ से मुक्ति मिल जाती है।

उपयोग सम्बन्धी हिदायतें

- आसपास में कहीं भी हैजा फैला हुआ हो, खरबूजा कभी न खाएं।
- खरबूजा खाने के पौन घण्टे बाद तक पानी या दूध नहीं पीना चाहिए, क्योंकि इससे अतिसार तथा हैजा होने का भय रहता है।
- खरबूजा कफकारक है। यह खांसी और जुकाम भी पैदा करता है। इसलिए दमा के रोगी, कफ के रोगी तथा सर्दी की प्रकृति वाले व्यक्ति को इसका सेवन नहीं करना चाहिए।
- खाली पेट, भोजन से पहले और भोजन के साथ खरबूजा नहीं खाना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से पीत प्रकुपित हो जाता है। किसी–किसी को पित्त ज्वर भी हो जाता है। खाना खाने के पच्चीस–तीस मिनट बाद खरबूजा खाना अधिक हितकर होता है।
- खरबूजा धूप व लू लगने के कारण गर्म हो जाता है। इसलिए साबुत खरबूजे को दस–पन्द्रह मिनट तक ठंडे पानी में पड़ा रहने के बाद ही छील और काटकर खाना अच्छा रहता है। ऐसा करने से इसकी गर्मी दूर हो जाती है।
- बहुत अधिक मात्रा में खरबूजे का सेवन विविध रोगों को निमंत्रण देना है, क्योंकि पेट और आंत कमजोर होती हैं। अतः खरबूजा अल्प मात्रा में ही खाना चाहिए। ❑

(पृष्ठ 2 का शेष) **पाठकों के विचार**

समीक्षा, पिछले पचास वर्षों में भारत के ग्रामीण क्षेत्र का उत्थान लेखों ने विशेष रूप से दिलो–दिमाग को स्पर्श किया।

ग्रामीण विकास की दिशा में हमें सफलता तो जरूर मिली लेकिन जनसंख्या वृद्धि ही प्राप्त सफलता को पीछे छोड़ देती है। जनसंख्या वृद्धि का कारण साक्षरता में कमी, राजनीतिक इच्छा – शक्ति का अभाव, बेरोजगारी, आर्थिक पिछड़ापन, धार्मिक कट्टरता आदि है। हर हालत में इस पर नियंत्रण की जरूरत है। *पर्यावरण की सुरक्षा और जलावन की समस्या* शीर्षक आलेख पर सरकार को ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

उदास दुल्हन कविता यथार्थ को प्रस्तुत करते हुए पत्रिका के आकर्षण में वृद्धि करती है।

डा. कृष्ण कुमार सिंह, स्टेशन रोड, नवादा (आरा), भौजपुर (बिहार)

शिक्षा हेतु सार्थक पहल की आवश्यकता

कुरुक्षेत्र का मार्च, 2000 का अंक पढ़ा। लगभग सभी आलेख अच्छे लगे। *स्त्री–बाल स्वास्थ्य : नई सदी में नई अपेक्षाएं,* कहानी : *नदियां बहती रहो* व कविता *उदास दुल्हन* काफी मर्मस्पर्शी रहे। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम स्वयं अपने अन्दर जागरूकता और सेवा–भाव पैदा करें और स्वकर्तव्य की गरिमा के प्रति अपने को समर्पित करें। स्त्री–शिक्षा समाज की सुदृढ़ नींव हेतु अत्यावश्यक है। अतः सभी का कर्तव्य बनता है कि स्वयं अपने स्तर से मिल–जुलकर एक सुन्दर शिक्षा–व्यवस्था हेतु सार्थक पहल की जाए। मानव – जीवन की सार्थकता यही है कि ज्ञान का कर्मरूप में प्रयोग हो, परसेवा का सुख हम उठाएं। अतः यहां सुशिक्षित व्यक्तियों का कर्तव्य बढ़ जाता है। यदि हम सभी अपने कर्तव्य की गरिमा, आने वाली पीढ़ियों हेतु अपना कर्तव्य, राष्ट्रहित की सर्वोपरिकता को जीवन–कर्म में उतारें तो वे दिन दूर नहीं जब मानवता की फसलें चारों ओर खुशी से झूमती मिलेगी।

उमेश चन्द्र राय, 266, चौखण्डी, कीडगंज इलाहाबाद (उ.प्र.)

मध्य प्रदेश के लिए कपार्ट की क्षेत्रीय समिति गठित

ग्रामीण विकास मंत्री श्री सुन्दरलाल पटवा ने मध्य प्रदेश के लिए लोक कार्यक्रम एवं ग्रामीण प्रौद्योगिकी परिषद्, कपार्ट की क्षेत्रीय समिति के गठन को मंजूरी दे दी है। पूर्व सांसद श्री कैलाश नारायण सारंग इसके अध्यक्ष होंगे। समिति का मुख्यालय भोपाल में होगा और यह मध्य प्रदेश राज्य के स्वयंसेवी संगठनों से प्राप्त अनुरोधों पर विचार करेगी।

कपार्ट, ग्रामीण विकास मंत्रालय के तहत कार्यरत ग्रामीण विकास गतिविधियों को बढ़ावा देने वाला प्रमुख संगठन है। यह देश भर के 6,300 स्वयंसेवी संगठनों को विभिन्न विकास कार्य–कलापों के लिए सहायता प्रदान कर रहा है। अभी तक मध्य प्रदेश के स्वयंसेवी संगठनों को कपार्ट के अहमदाबाद स्थित क्षेत्रीय कार्यालय द्वारा सहायता की जा रही थी।

क्षेत्रीय समिति के सरकारी और गैर सरकारी सदस्यों का कार्य–काल तीन वर्ष होगा। यह समिति 10 लाख रुपये तक की लागत वाले प्रस्तावों पर विचार करेगी और राज्य के लिए स्वीकृत परियोजनाओं पर निगरानी रखेगी। समिति स्वयंसेवी संगठनों के कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए संस्थानों के नाम भी सुझाएगी और राज्य में स्वयंसेवी कार्य–कलापों को प्रोत्साहित करेगी।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

आर एन. /708/57
डाक–तार पंजीकरण संख्या :डी (डी एल) 12057/2000
आई.एस.एन.एन. 0971–8451
पूर्व भुगतान के बिना के अधीन डी.पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक में डालने की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)–55

R.N./708/57
P&T Regd. No. D (DL) 12057/2000
ISSN 0971-8451
Licenced under U (D
to Post without pre-payment of DPSO, Delhi-54

श्रीमती सुरिन्द्र कौर, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली–110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक: अरावली प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू–30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया–II, नई दिल्ली–20 संपादक: बलदेव सिंह मदान